आर्य्यसमाज की पुस्तकें तथा अन्य २ संस्कृत पुस्तकें आर्य्य पुस्तकालय आगरे से मिलेंगी।

ओ३म्

तत्ववेत्ता ऋषि की कथा।

प्रथम अध्याय

(जिसमें षट शास्त्रों की एकता का विषय आरम्भ किया गया है और मुक्ति के स्वरूप पर छै शास्त्रों का मत वर्णित है।)

श्रीमान पण्डित कृपाराम जी शर्म्मा जगरांव निवासी
द्वारा विरचित।

जिसको

बाबू मुन्ना बिहारी लाल प्रबन्धकर्त्ता आर्य्य पुस्तकालय आगरा
ने मुद्रित कराकर प्रकाशित किया।

आगरा

राजपूत ऐंग्लो ओरियण्टल प्रेस में मुद्रित हुई।

[मूल्य /)

प्रथम बार [१००० प्रति]

ओ३म्

तत्ववेत्ता ऋषि की कथा।

अध्याय पहला

प्रकरण पहला

एक दिन महर्षि तत्ववेत्ता जी महाराज अपने शान्ति आश्रम में बैठे हुये थे और इर्द गिर्द बहुत से गुण ग्राही शिष्य विराजमान थे और ऋषिकी विचार शक्तिसे शिष्योंके दिलमें कोई भी ऐसी शंका नहीं पैदा होती थी जिसका उनको फौरन उत्तर न मिले। अपने दिलमें ऋषिके समागमको ईश्वर की कृपा समझ रहे थे और ऋषि संसार के उपकार करने के वास्ते चिन्ता कर रहे थे कि इतने में एक मुसाफिर आगया और उसने ऋषि से कहा कि महाराज घोर कलियुग आगया है सत्यव्रत और धर्म विचारका बिलकुल नाश होगया। झूठ छल कपट दगाबाज़ी ने संसार में अपना राज्य क़ायम करलिया है शान्ति शील विद्वानोंको लोग मूर्ख कहते हैं और छली कपटी निरक्षर महात्मा बहुत छिपके भेष बनाकर अपनी ठगीकी दुकानों पर बैठे महात्मा बन रहे हैं चारों तरफ उनकी पूजा हो रही है ईश्वर के उपासक लोग जिनको महात्मा जन होने अनन्य भगतके नामसे पुकारा था आज संसारके मूर्ख लोगोंकी नज़रमें नास्तिक कहला रहे हैं और नाच कूदकर तान तोड़नेवालों और रामजनी और रास धारियोंमें भेष रखने वाले महन्तों अपने वेदकी ढोंग के सहारे भगत बनरहे हैं वेद विद्याका लोप होगया है ऋषियों की सन्तान जिसका धर्म वेदोंका पढ़ना और उनके अनुकूल आचरण करना था आज आजीविका के आधीन होकर धर्म व संस्कृत विद्याको बिलकुल छोड़ चुके हैं महाराज इस कलियुगने ऐसा अनर्थ किया कि वेद और धर्मके नाम पर तो धेले मिलते हैं अगर किसी रंडी और भडुवेका पैग़ाम आवे तो लाला कोठीसे बधाई करते हैं और उन नामची वेश्या को भेंट करते हैं तो बड़े २ धर्मध्वजी भी शर्म नहीं करते महाराज माता पिता की सेवा करने के बदले अंग्रेजी पढ़े लिखे छोकड़े उन्हें ओल्ड फैशन के आदमी व बेवकूफ बतला रहे हैं और पुराने फैशन के आदमी माता पिता को भोजन न कराकर उनको बहुत कुछ नाम काफ़ कह रहे हैं।

हे भगवन् पिता पुत्र में द्वेष फैल रहा है भाई भाई के खूनका प्यासा होरहा है। मा बेटी में प्यार नहीं और जिधर देखो मुकद्दमेंबाज़ी का ज़ोर बढ़ता चला जाता है। हे भगवन्! संसार की ऐसी दुर्दशा के दूर करने का कोई इन्तज़ाम बतलाइये जिससे यह भारत वर्ष फिर अपनी असली दशा पर आजावें और यह सारी खराबियां दूर होजावें।

(२) मुसाफिर की इस बात को सुनकर ऋषि ने कहा कि भाई जब तक संसार में धर्म के करने वाले और प्रचारक मौजूद थे तब तक तो यह देश उत्तम अवस्था में था लेकिन अब न तो धर्म के करने वाले हैं और न धर्म का प्रचार होता है सब लोग मिथ्या ज्ञान में पड़े हुए अपनी ज़िन्दगी को गवां रहे हैं इनमें से बहुत से तो ऐसे मूर्ख हैं कि वह सत् धर्म की जगह राजनीति को देना चाहते हैं लेकिन वे नहीं जानते कि लोहे की लाठ का काम एक कागज़के खोखले खम्भे किस तरह चलसकेगा जिसवक्त चोट पड़ेगी वह खम्भा टुकड़े २ होजायगा ऐसीही मुसीबतके आनेपर राजनीति के सहायक ठहर नहीं सके मुसीबत पर मुसीबत उठाकर दूसरोंका भला करना यह धर्म वीरों का काम है क्योंकि धर्म वीर को आइन्दा की आशा गिरने नहीं देती वह जानता है कि खेती बोने के वक्त किसान को बीज डालना पड़ता है और खेत के जोतने पानी देने वगैरह में बहुत सी मुसीबतें उठानी पड़ती हैं घास वगैरह जो दर्मियान में उग खड़ी होती है उनको उखाड़ने पर मिहनत करनी होती है गर्ज़ कि खेती के पक जाने तक पचासों किस्म की तकलीफें बरदाश्त करते हैं तब जाकर कहीं खेत में फल काटने का मौका नसीब होता है उसकी कामयाबी तमाम गुज़िश्ता तकलीफोंको एकदम भुला देती है अब उसको अपने बीजसे सैकड़ों हिस्से अनाज ज़ियादा मालूम होता है और मिहनत से ज़ियादा मुद्दत तक आराम की आशा होती है इसी तरह धर्म के खेत को बोनेवाले लोगोंको हज़ारों किस्मकी कुरबानियों का नुकसान उठाना पड़ता है और सैकड़ों किस्मकी मुसीबतोंको सहना होता है तब जाकर मुक्तिरूपी वस्तु हासिल होती है क्या वह इतमीनान जो एक किसानको जिसने खेतबोकर काश्तकिया हासिल है किसी भीख मांगनेवाले फकीरको जो रोज़मर्रा भीख मांग लाता है लेकिन खेतीकी मिहनत और बीज डालने के नुकसान से बचना चाहता है कभी हासिल होसका है? हरगिज़ नहीं इसी तरह जो आनन्द धर्म वीरों के दिलको शांति देता है वह राजनीति वालोंको ख्वाब में भी नसीब नहीं होता उनका दिल हमेशा इस खौफमें कांपता है कि कहीं

हमारी नीति ज़ाहिर न होजावे उनकी सारी शक्ति अपनी कमज़ोरी के छिपाने में खर्च होती है लेकिन धर्म वीर को कुछ खौफ नहीं वह अपनी आत्मा का खून करना महा पाप समझता है उसका ज़ाहिर व बातिन एक है उसको अपने मालिक हक़ीक़ी यानी ईश्वर पर पूरा भरोसा है वह दुनिया की नेकी बदी की बिलकुल परवाह नहीं करता वह हाकिम और बिरादरी के खौफ से लाख दर्जे बढ़कर परमेश्वर का खौफ रखता है वह छिपकर पाप करना नहीं जानता जो कुछ धर्म समझता है कर गुज़रता है इसके डरने की कोई वजह नहीं क्योंकि उसके नज़दीक मालिक के हुक्म पर मरना खुदा की नाफरमानी करके जीने से लाख दर्जे बेहतर है वह हरएक जीवका भला चाहता है उसका अपना पराया कोई नहीं सारा संसार उसका अपना ही कुटुम्ब है जैसा कि लिखा भी है।

अयंनिजःपरोवेति गणनालघुचेतसाम्।
उदारचरितानांतु वसुधैवकुटुम्बकम्॥

अर्थ—यह मेरा है और यह पराया यह तो छोटी अक़लवालों का खयाल है फराख़ दिल तो सारे संसार को अपना खानदान समझता है हां उसको मालिक के हुक्म का पूरा खयाल होना चाहिये जो लोग मालिक से बागी हों उनको मालिक के मातहत करना उसका फर्ज़, और जो लोग मालिक के अज़ीज़ हैं उनसे मुहब्बत से पेश आना और उनकी इमदाद करना भी ज़रूरी है इतना कहकर कुछ देर के वास्ते महर्षि चुप हो गये। थोड़ी देर के बाद ऋषि ने कहा संसार में बहुत लोग तो ऐसे हैं जो धर्म के नाम से गुज़ारह करते हैं उन को धर्म के नाम से प्यार नहीं और न वह धर्म के स्वरूप को जानते हैं वह सिर्फ दिखलावे के धर्म सभा के सभा सद बन जाते हैं उन का मतलब एक किस्म की दुकानदारी करके अपना रोज़गार कमाना होता है। इस किस्म के दुकानदारों ने धर्म को बहुत कलङ्कित कर दिया ऐसे ही खुदगर्ज़ों ने धर्म के नाम पर लोगों को लड़ा कर और संसार में खून की नदियां बहाकर फायदह उठाया है ऐसे ही लोगोंने मे[illegible] जाति को इस दुर्दशा में पहुंचा दिया जिसका सुधारना अब मुश्किल मालूम देता है। बहुत से लोग ऐसे हैं जो अपनी प्रतिष्ठा के वास्ते धर्म ध्वजा उठाये फिरते हैं उनके दिलों में धर्म का बिल्कुल प्रेम नहीं और वे धर्म के ज्ञानसे बिल्कुल खाली हैं उन्हें धर्म का स्वरूप विचारने की ताकत नहीं लेकिन वे अपनी

शोहरत के वास्ते धर्म के हर काम में आगे नज़र आते हैं। उनका कोई उसूल नहीं जिस तरफ़ को ताक़त देखेंगे उधर ही गीत गाएँगे अगर किसी धार्मिक सभा में चले गये तो धर्म धर्म चिल्लाने लगे अगर किसी क़ौमी सभा में पहुँचे तो क़ौम क़ौम की धूम मचा दिया। अगर विद्वानों में गये तो विद्या की महिमा गाने लगे वीरों में पहुँचे तो वहाँ वीरता पर व्याख्यान शुरू होगये। ये लोग धर्म से धन कमाना नहीं चाहते, इन्हें सिर्फ़ शोहरत का लालच है ख़्वाह धर्म से मिले या अधर्म से, यह दूसरों पर अपनी हुकूमत चाहते हैं इसके वास्ते कुछ माल की क़ुरबानी करने के लिये भी तैयार हैं लेकिन अगर जान पर ख़तरा आजाय तो छोड़कर भागने को भी उमदा समझते हैं ऐसे लोग भी मुल्क को विश्वास घात करके नुक़सान पहुँचाना चाहते हैं।

ऋषि ने कहा मुसाफ़िर इसप्रकार बहुत क़िस्म के लोग संसार को नुक़सान पहुँचाने वाले हैं पर ये सब धर्म की महिमा से नावाक़िफ़ हैं धर्म के असली बल को नहीं जानते धर्म के बल को जानने वाले थोड़े ही महात्मा हैं।

महर्षि तत्ववेत्ता के इस वाक्य को सुनकर मुसाफ़िर ने यह सवाल किया। हे भगवन् धर्म क्या चीज़ है? और उसका बल और पराक्रम कैसा है उसका स्वरूप क्या है उसके लक्षण क्या हैं आप कृपा करके मेरे इन शंकाओं का जवाब दीजिये।

प्यारे पाठक! मुसाफ़िर की इस बात को सुनकर महर्षि बोले कि धर्म का विचार बहुत ही कठिन है लेकिन धर्म उसे कहते हैं कि जो वस्तु को धारण रखता है यानी जिसके सबब चीज़ की हस्ती और इज़्ज़त क़ायम रहती है जैसे अग्नि का धर्म गर्मी और रोशनी है जबतक ये मौजूद रहते हैं तब तक अग्नि मौजूद रहती है जहाँ इनमें से किसी एक का भी नाश हुआ उससे अग्नि का अपमान होता है जैसे जब तक अग्नि में गर्मी होती है तब तक शेर, आदमी, हाथी वग़ैरह कोई भी ख़ौफ़नाक से ख़ौफ़नाक जानदार उसके नज़दीक नहीं आसक्ता लेकिन जिसवक़्त अग्नि में से उसका धर्म अलग हो जाता है तब च्यूँटियाँ उसे राख समझ कर उसपर पाँव देकर चलती हैं ऐसे ही धार्मिक आदमी को कोई सांसारिक कष्ट सता नहीं सका लेकिन जहाँ आदमी धर्म से गिरा कि उसको इन्द्रियाँ, मन और शरीर की गुलामी करनी पड़ती है और यह गुलाम हमेशा ख़ाहिश नफ़्सानी के सबब तकलीफ़ पाता है इसवास्ते हरएक आदमी को अपने धर्म की हिफ़ाज़त लाज़मी है वरना दुनिया की ख़ाहिशों से बचना मुश्किल है।

एक महात्मा कहते हैं:—

अनित्यानिशरीराणि विभवोनैवशाश्वतः।
नित्यंसन्निहितोमृत्यु कर्त्तव्योधर्म संग्रह॥

अर्थ—यह जिस्म हमेशा रहने लायक़ नहीं लाखों राजे और महाराजे शूर और बहुतसे पहले पैदा होकर मर गये क्या आज हम उनके जिस्मों का निशान कहीं से पा सकते हैं? हरगिज़ नहीं। बड़े २ अक़्लमंद और दौलतमन्द इस दुनिया में अपने जिस्म की हिफ़ाज़त करते रहे क्या आज उनके जिस्मों का पता चल सकता है बिलकुल नहीं करोड़ों ख़ूबसूरत नौजवान दुनिया में ऐश व इशरत के बजाय बीमारियों में मुब्तला होकर मरगये फिर उनका कोई खोज लगा सकता है बिलकुल नहीं आज न सिकन्दर का जिस्म है न दारा का और न भीम है न अर्जुन न राम है न रावण न रघु है न दलीप न अकबर है न हुमायूँ न शाहजहाँ है न औरंगज़ेब न महमूद ग़ज़नवी है न बोना पार्ट ग़रज़ कि हरएक जिस्म की वही हालत हुई यानी फ़ना होगया इसवास्ते जिस्म को हमेशा रहनेवाला समझकर उसकी हिफ़ाज़त और आराइश में मनुष्य जीवन का बेश क़ीमत ख़ज़ाना ख़र्च होना बहुत ही बेवक़ूफ़ी का सबब है और धन व दौलत और विभव भी लाज़वाल नहीं इसको तो कहीं क़याम भी नहीं आज जो दुनियाँ में सबसे बड़ा बादशाह है कल उसके हाथमें भीख का ठीकरा नज़र आता है। आज जो करोड़ पति कोठीदार है जिसकी हुन्डी विलायत तक बेखटके चलती है कलही उसका देवाला होजाता है और वह बजाय कोठीदार के जेल की ज़िल्लत ख़ारी में मुब्तला नज़र आता है दौलत दुनियाँ आज तक न किसी की हुई है और न होगी। हरएक बेवक़ूफ़ इसको अपनी मानता हुआ चला गया लेकिन यह किसी के साथ न गई इसवास्ते दौलत पर भरोसा करना अव्वल दर्जे की बेवक़ूफ़ी है और मौत रोज़मर्रह नज़दीक आती आती है वालदैन समझते हैं कि हमारे लड़के की उम्र बढ़ रही लेकिन दरअसल रोज़मर्रह घटती चली जाती है यानी पैदाइश दूर और मौत नज़दीक आती है इसवास्ते मनुष्य का कर्तव्य है कि धर्म के जमा करने की कोशिश करे क्योंकि संसार में सिवाय धर्म के कोई चीज़ भी मुआफ़िक़ नहीं ऋषि की इस बात को सुनकर मुसाफ़िर ने कहा कि हे महाराज धर्म क्या चीज़ है।

ऋषि—धर्म कहते हैं धारण करने वाले यानी चीज़ की हस्ती और इज़्ज़त क़ायम रखने वाले को या जिसको धारण करने से चीज़ की हस्ती

कायम रहे जैसे अग्नि का धर्म है रोशनी और गर्मी यह दोनों चीजें अग्नि को कायम रखती हैं इनमें से अगर एक भी न होती तो अग्नि कायम नहीं रह सकी यह ऐसे ही गुणोंका नाम धर्म है।

मुसाफिर-महाराज जीव का धर्म क्या है जिससे जीव कायम रहता है जिसके घटने से जीव की ताकत घटती है ?

ऋषि—जीव का धर्म ज्ञान और प्रयत्न यानी इल्म वा हरकत है इन्हीं दो गुणोंके बढ़ने से जीवात्माकी शक्ति बढ़ती है और इन्हीं के घटने से जीवात्मा की शक्ति का नाश होजाता है।

मुसाफिर-तो क्या महाराज ज्ञान और क्रिया के बगैर जीव कायम नहीं रह सका और ज्ञान और क्रिया-शरीर-इन्द्रिय मनके तअल्लुक से होते हैं गोया जब ये चीजें न हों तब ज्ञान और हरकत न होगी और ज्ञान और हरकत के न होने से जीव न होगा इसवास्ते कभी भी शरीर के बिना जीव रह नहीं सका और यह शरीर आदि दुख सुख के साधन हैं इसवास्ते जीव सदा दुखी सुखी रहेगा दूसरे इन्हीं को तो बन्धन माना है। अब मुझे मालूम हुआ कि जीव कभी बन्धन से छूट नहीं सका इसवास्ते मोक्ष के साधन फजूल हैं जीव को शरीर और इन्द्रिय की मजबूती की कोशिश करनी चाहिये।

ऋषि—ऐसा नहीं इन्द्रिय और मन सिर्फ बैरूनी ज्ञान यानी प्रकृति के ज्ञान के साधन और आत्मिक ज्ञानके वास्ते इनकी कोई जरूरत नहीं और नहीं अन्दरूनी ज्ञान यानी परमात्मा के जानने के वास्ते इनकी कोई जरूरत है जैसे घर के दरवाजे बाहर की चीजों को घरमें लाने के वास्ते होते हैं और अन्दरूनी चीजों के वास्ते दरवाजों की कोई जरूरत नहीं होती इसी तरह जीवात्मा का ज्ञान और प्रयत्न बिना इन्द्रिय और शरीर के भी मुमकिन होता है और जीव स्वभाव से बंधन में नहीं और इसकी मुक्ति भी हो सकी है।

मुसाफिर-जिस मकान में दरवाजा नहीं होता उस मकानमें सूरज की रोशनी के बिना अन्दरूनी या बैरूनी प्रकाश का ज्ञान भी नहीं हो सका इसी तरह इन्द्रिय और मनके बगैर बैरूनी प्रकाश का अभाव होगा जिससे जीवात्मा का कुछ भी ज्ञान न रहेगा इस वास्ते ज्ञान के साधन लाजमी हैं जिससे जीवात्मा को अन्दरूनी और बैरूनी ज्ञान हासिल होसके।

ऋषि—चूंकि सूर्य एक देश और मकानसे बाहर है इसवास्ते उसके प्रकाश के अन्दर आने के वास्ते दरवाजह की जरूरत है लेकिन प्रकाश स्वरूप परमात्मा घट घट में मौजूद है उसका प्रकाश हासिल करने के वास्ते किसी दरवाजह की जरूरत नहीं और जिस कदर ये दरवाजे हैं उस ज्ञान के वास्ते जो जीवात्मा को मुक्ति का सबब नहीं इस वास्ते निष्फल हैं क्योंकि ब्राह्मण ग्रन्थों में लिखा है :—

परोक्ष प्रियाहि देवा प्रत्यक्ष द्विषः।

जितने विद्वान लोग हैं वे सब परोक्ष के प्यारे और प्रत्यक्ष के मुखालिफ होते हैं क्योंकि परोक्ष वह है जो इन्द्रिय और मन से नजर न आवे सो वह क्या है आत्मा और परमात्मा और जो इन्द्रिय और मन से नजर आवे वह अपरोक्ष है सो इन्द्रिय के ग्रहण करने लायक सिर्फ प्रकृति के सब विकार हैं और कोई चीज नहीं इसवास्ते अक्लमन्द लोग प्रत्यक्ष होनेवाली प्रकृति को दुःखका साधन समझकर और परोक्ष जीवात्मा और परमात्मासे प्यार करते हैं।

तत्ववेत्ता ऋषि जो मुसाफिर से यह बात कर ही रहे थे कि महात्मा गौतमजी न्याय दर्शनके आचार्य भी ऋषि के मकान पर आगये उनको देखते ही सब लोग एकबारगी उनके सन्मान के वास्ते खड़े होगये और जब महात्मा गौतम जी महाराज बैठगये तो सब लोग भी बैठगये—मुसाफिर जो कि आज नया ही वारिद हुआ था जिसको महात्मा गौतम जीका कुछ भी हाल मालूम न था महात्मा गौतम जी और ऋषिकी बात चीत सुनकर हैरान हो रहा था और ऋषिसे उनका नाम और हाल पूछना चाहता था तत्ववेत्ता ऋषि ने मुसाफिर की मनशा को समझकर फरमाया कि यह महात्मा गौतम हैं न्याय दर्शन के आचार्य और दर्शन शास्त्र की पहली बुनियाद डालनेवाले हैं अगर भारत वर्ष को किसी के कलम से गौरव है तो इन्हीं महात्मा की कलम है-मुसाफिर ऋषि की इस बात को सुनकर कहने लगा :—

मुसाफिर-हे भगवन्! न्याय शास्त्र किसे कहते हैं? उसका मतलब क्या है और इस किस्मके महात्मा ऐसे काममें क्योंकर लगगये यह बिलकुल वैराग्य वाले मालूम होते हैं। मुसाफिर की इस बातको सुनकर महात्मा तत्ववेत्ता ऋषि ने कहा कि इसका जवाब खुद महात्मा गौतम जी को ही देना चाहिये क्योंकि इनके सामने किसी दूसरे को बोलने की शक्ति नहीं।

गौतमजी-इस संसार में जितने प्राणी हैं सबके सब अपनी बातको ठीक और

दूसरे की बात को गलत कहते हैं जिससे संसार में एक खोफ़नाक नज़ारह पैदा होगया है रात दिन लड़ाई झगड़े बढ़ते चले जाते हैं इस खराबीको देखकर सच और झूठ मालूम करनेके वास्ते जिन चीज़ोंकी ज़रूरत है उनका नाम प्रमाण या सबूत है आजकल इसे कसौटी भी कहते हैं और इस प्रमाण से हरएक चीज़की यथार्थ तत्व का इम्तहान करना ही न्याय कहलाता है। जैसे एक सर्राफ़ के पास जब कोई सोना बेचने जाता है तो सर्राफ पहले उस सोनेको आगमें गर्म करके कसौटी पर इम्तहान करता है बाद काट कूटकर देखता है अगर इन इम्तहानों में वह सोना खरा मालूम होता है तब तो वह खरीदता है और अगर खोटा मालूम होता है तो छोड़ देता है चूंकि खोटी खरी दोनों किस्म की चीज़ें मौजूद हैं या दुःख सुख दोनों के साधनों से जीवात्मा का तअल्लुक होता है इस वास्ते कौन खोटा कौन खरा है या कौन दुःखका साधन और कौन सुखका साधन है इसके ठीक ज्ञान हासिल करने को जिन सबूतों या प्रमाणोंकी ज़रूरत है उनको हमने बतलाया है और न्याय नाफ़ज़ के माने प्रमाणों से चीज़ की यथार्थ तत्व का इम्तहान करना है।

मुसाफिर-संसार में दो चीज़ोंकी ज़रूरत होतीहै जैसे एक तो आंख की और दूसरे सूर्य की रोशनी की एक कानों की दूसरे आकाश की इसी तरह संसार बुद्धि और विद्याकी ज़रूरत है और बुद्धि तो संसार में हरएक जीवात्मा को है क्योंकि वह जीवात्मा का गुण है, विद्या परमेश्वर ने वेदों में देदी है फिर इस शास्त्र की हमारे ख़याल में कोई ज़रूरत नहीं।

गोतमजी-यह तो ठीक है कि आंख और सूर्य के होते हुए मुसाफिरके वास्ते रास्ता चलने में और प्रकाश की ज़रूरत नहीं लेकिन अगर आंख में बीमारी हो या सूर्य की रोशनी की जगह कोई चिराग़ को ही सूर्य बतलादे उस हालत में क्या होगा सूर्य तो आंखकी बीमारी को दूर नहीं करेगा और नहीं सूर्य और चिराग का फ़र्क सूर्य से या बीमार आंख से मालूम होगा इसवास्ते जब बुद्धि में अविद्या का दोष आजावे या संस्कार के दोष से मनुष्य की बातों को ईश्वरीय विद्या कहा जावे तो ऐसी बीमारी की हालतों में इस प्रमाण वाली विद्या का होना लाज़िमी है वरना बीमारी दूर न होगी।

मुसाफिर-महाराज अक्ल और इल्म में अगर दोष आजावे तो उसका क्या इलाज करना चाहिये और वह कौन कौन से दोष हैं जिनसे अक्ल और इल्म को नुक़सान पहुंचता है।

गोतमजी-अगर अक्लमें दोष आजावे तो उसे ईश्वरीय विद्याके साथ मिलाकर दूर करना चाहिये जैसे सूर्य के बगैर आंखमें देखनेकी ताक़त नहीं और सूर्य आंखका मददगार मालूम होताहै लेकिन जिसवक्त आंख में कोई बीमारी आजाती है उस वक्त आंख सूरज की रोशनी से घबड़ाती है जब अक्ल विद्या से घबड़ावे तब समझ लेना चाहिये कि अब अक्ल में कुछ खराबी आ गई है क्योंकि इल्म अक्लका मददगार है न कि दुश्मन और जो शख्स अपने मददगारसे घबड़ाता है या डरता है तो समझ लेना चाहिये कि उस के हवास ठीक नहीं अगर विद्या में कोई दोष होतो उसके दूर करने के ये इलाज हैं। विद्या में तीन किस्म के दोष आ सक्ते हैं एक (अनृत) यानी झूठ जैसे विद्या ने बतलाया कि जिसको लड़के की ख़्वाहिश होवे वह पुत्र के वास्ते यज्ञ करे दूसरे (व्याघात) यानी अपनी बातको आप काटनां जैसे पहले कहाकि संसारमें सुखकी सबब हमेशह विद्या है लेकिन आगे चलकर कहाकि आजकल विद्यासे सुख नहीं होसक्ता तो ऐसी हालत का नाम व्याघात है तीसरे पुनरुक्त यानी एक ही बात को बिला मतलब दो तीन बार कहना ये तीन दोष विद्या में आ जाते हैं इनके दूर करने का तरीक़ा यह है कि पहले सुने उसके बाद उसको ख़ूब दलीलों से विचारे जब कोई दलील भी उसको काट न सके तो समझ ले कि अब विद्या में दोष नहीं रहा अब इसके मुताबिक़ चलना चाहिये।

मुसाफिर-महाराज क्या ईश्वर को बनाई हुई विद्या में भी दोष आ सक्ता है अगर ईश्वर के बनाये हुए कामों में भी दोष रहा तो निर्दोष किसी का काम नहीं होसक्ता।

गोतमजी-ईश्वर की बनाई चीज़ों में जो दोष मालूम होताहै वह अन्दर असल तो मनुष्यों के ज्ञान से तअल्लुक़ रखता है जैसे सूर्य को ग्रहण लगता है तो क्या ईश्वर के बनाये हुये सूर्य में ग्रहण है? नहीं बल्कि सूर्य और आंखके दर्मियान एक परदह आगया है इसी तरह जब विद्या और बुद्धि के दरमियान कोई परदह आजाता है तो उसे कहते हैं

अविद्या यानी दोषवाली विद्या।

मुसाफिर-महाराज वह कौनसा ऐबदार है जो मनुष्यों के ज्ञान से विद्या को अलग करके अविद्या बना देता है।

गौतमजी-संसार में दो किस्म के पदार्थ हैं एक तो वे जो इन्द्रियों से महसूस होते हैं, दूसरे वे जो हवासों में बिलकुल महसूस नहीं होते बल्कि मन और बुद्धि से जाने जाते हैं-जो पदार्थ ज्ञान इन्द्रियों से महसूस होते हैं उनमें हवासों के बिगड़ जाने से अविद्या पैदा होती है जैसे किसी को यरकान की बीमारी होगई होतो वह हर चीजको पीला देखता है वास्तव में चीजें जर्द नहीं हैं. उनको जर्द देखना अविद्या है यानी देखना ज्ञान तो है लेकिन उलटा ज्ञान है क्योंकि सफेद को पीला देखते हैं इसका नाम इन्द्रिय दोष या हवासों की खराबी है दूसरे जो चीजें हवासों से महसूस नहीं होतीं उनमें संस्कार दोष होता है चूंकि बुद्धि का तअल्लुक विद्यासे है और विद्या बजरिये सुननेके हासिल होती है तो जब एक बात को मुद्दत तक गलत सुनते चले आवे तो उसका ठीक ज्ञान नहीं होता इसे संस्कार दोष कहते हैं सो यह दोनों दोष विद्या को अविद्या बना देते हैं।

मुसाफिर महाराज विद्या का लक्षण क्या है?

गौतमजी-दोष से रहित ज्ञान को विद्या कहते हैं यानी जो ज्ञान इन्द्रिय और संस्कार के दोष से खाली हो उसे विद्या कहते हैं और विद्या के मानी प्रकाश करनेवाले के भी हैं।

मुसाफिर-महाराज विद्या भाव को बतलाती है तो अभाव यानी नफी के मालूम करने के वास्ते कौनसी चीज है।

गौतमजी-विद्या से भाव और अभाव दोनों का ज्ञान होता है जैसे जिस रोशनी से हम अपने मकानमें कपड़े को पड़ा हुआ देखते हैं उसी रोशनी से हमें कपड़े के न होनेका भी ज्ञान होता है संसार में कोई चीज नहीं जिसका ज्ञान बुद्धि और विद्यासे न हो।

मुसाफिर भगवन् संसार में मनुष्योंकी बुद्धि भी मुखतलिफ किस्मकीहै और विद्या भी मुखतलिफ किस्मकी नजर आती है इससे मालूम होता है कि सुख के हासिल करने के तरीके भी मुखतलिफ किस्म के होंगे।

गौतमजी-जिस तरह संसारमें हरएक आदमी को आंख देखती है कान सुनते

हैं नाक सूंघती है और आंख की मदद के वास्ते सूर्य और कानकी मददके वास्ते आकाश और नाककी मदद के वास्ते जमीन मौजूद है अब न तो किसीकी आंख सुन सकती है और न किसीके कान देख सके हैं और न किसीकी आंख को जमीन मदद दे सकी है और न जमीके कानको सूर्य मदद दे सका है इससे साफ मालूम होता है कि संसारमें हरएक इन्सानके वास्ते एकही रास्ता है और जो उस रास्ते से गिर जाते हैं वे मुखतलिफ अतराफ में भटकते हैं जैसे हिसाब में दो और दो का सच्चा जवाब चार सिर्फ एक ही है बाकी जिस कदर जवाब होंगे सब गलत होंगे ऐसे ही संसार में विद्या और बुद्धि एकही है बाकी इखतलाफ सिर्फ दोष के आजाने से मालूम होता है।

मुसाफिर-महाराज-जब संसारमें सत्धर्म और सत् विद्या एक है तो ये नाना मत किस तरह पैदा होगये।

गौतमजी-सिर्फ न्याय शास्त्र के न जानने सेही संसारमें ये झगड़े फैले हैं अगर लोग न्याय शास्त्र को जानते तो संसार में एक भी झगड़ा नजर न आता।

मुसाफिर- न्याय शास्त्रके न जानने से और इस किस्म के इखतलाफात से क्या तअल्लुक है।

गौतमजी-जब मनुष्य को सत्य असत्य के जानने के असबाब का ठीक ज्ञान नहीं होता तब गलती से सत्य को असत्य समझने लगता है इसी तरह पर बहुत से मत भेद हो जाते हैं अब भी जब तक न्याय के ठीक अर्थ को न समझेंगे तब तक ये झगड़े दूर न होंगे।

मुसाफिर-महाराज मेरी समझ में नहीं आता क्योंकि जब तक संसार में न्याय शास्त्र नहीं बना था तब तक सब को न्याय शास्त्रका इल्म ही नहीं था उस वक्त कोई भी मत नहीं फैला अब जब कि बहुत से लोग न्याय शास्त्र को जानते हैं और बहुत से नहीं जानते, तब क्यों ये झगड़े हो रहे हैं।

गौतमजी-संसारमें जब सूर्य की रोशनी होती है तब हीं सब में इत्तफाक होता है यानी सब को नजर में चीजोंकी तरह मालूम होता है जिस वक्त रात को बिलकुल अन्धकार होजाता है तब भी सब की नजर एकसी मालूम होती है किन्तु जिस वक्त चिरागोंकी रोशनी

होकर कहीं रोशनी और कहीं अन्धेरा होता है उसवक्त मज़हब में इख़्तिलाफ़ फैल जाता है और जब तक दुनियां में कोई रोग न पैदा हो तब तक उसकी औषधि के न होने से किसीको तकलीफ़ नहीं होती लेकिन जब बीमारी पैदा होजावे फिर उसकी दवाई न मिले तो बहुत मुशकिल मालूम पड़ता है ऐसे ही जब तक दुनिया में चारों आश्रम बाक़ायदा जारी है और वेदों की तालीमभी बाक़ायदा ठीक तौर पर हो रही थी उस वक्त न तो मज़हब परस्ती कमज़ोर था और न नास्तिकता थी इस वास्ते जब कहीं खोटा सोना बिकता न था तब कसौटी के होने न होने में इतना हरज न था लेकिन अब वह वक्त आगया है कि संसार में अविद्या नास्तिकता मूर्ति पूजा इत्यादि बहुत सी बीमारी पैदा होगई है और मनुष्यों में पूरा ज्ञान नहीं जिससे वह हरएक चीज़ के असली तत्व को समझ सके और न बिलकुल अन्धकार है जिससे उन्हें कुछ भी ज्ञान न हो इसवास्ते इसक़दर इख़्तिलाफ़ का होना लाज़मी बात है और इस मर्ज़ के वास्ते न्याय शास्त्र की तालीम लाज़मी है और जब तक यह तालीम घर २ में न फैल जावे तब तक अविद्या और नास्तिकता का डेरा यहां से अलग नहीं होगा और जब तक ये दोनों बीमारी यहां से रवाने न होजावें तब तक भारत सन्तान को सुख न होगा।

मुसाफ़िर-महाराज अगर ऐसी ही बात है तो मैं आज से ज़रूर न्याय शास्त्र के पढ़ने की कोशिश करूंगा और जब मुझको इसका ज्ञान होजावेगा तो फिर इसको सारे संसार में फैलाकर इस अविद्या को दूर करने की कोशिश करूंगा।

दूसरा प्रकरण

महात्मा-गौतम मुनि और तत्ववेत्ता ऋषि के तमाम शिष्य बैठे हुये धर्म पर विचार कर रहे हैं-नित्य कर्मोंसे फ़ारिग़ हो कर और भी ऋषि लोग इस सभा में आ रहे हैं कणाद, कपिल और पातांजलि भी आगये जैमनी और व्यास के बुलाने के वास्ते आदमी भेजे गये क्यों कि आज के दिन तत्ववेत्ता ऋषि ने यह विचार कर लिया था कि भारत वर्ष की अविद्या दुर्भाग्य को मिटाने के वास्ते तमाम ऋषियों में व्यवस्था लेकर सब की सम्मति से

एक सीधा रास्ता तैयार किया जावे जिस से संसारके लोग आरामसे मंज़िल मक़सूद तक पहुंच जावें इतने में महात्मा व्यास और जैमुनि जी सभा में आन मौजूद हुये और सब आपस में विचार करने लगे कि इस मुक्ति मार्ग को किस तरह पर व्यवस्था करनी चाहिये। वशिष्टजी बोले कि आज जो यह ऋषि मंडल जमा हुआ है इस की उद्देश तो आप लोगों को मालूम ही होगा लेकिन मैं इतना और भी अर्ज़ करना चाहता हूं कि यह रास्ता बहुतही दूर दराज़ और मुशकिल है कोई आदमी भी ख़्वाह वह कैसा ही विचारशील हो एक दफ़े ही इस मंज़िल पर नहीं पहुंच सक्ता इस वास्ते रास्तः की मंज़िलों पर ठहर ने के लिये बख़ूबी इन्तज़ाम करना चाहिये और सफ़र की दूरी दराज़ी और मुसाफ़िरत के वक्त की कमी के मद्द नज़र से यह भी इन्तज़ाम होना चाहिये कि जिस वक्त सूर्य भगवान छिप जावे तब भी मुसाफ़िर अपने रास्तः पर बराबर चले जायें उनको कोई विघ्न रास्तः में न सतावे और रास्तः में रात के लिये ऐसा लाइटहौस या रोशनी के घर बनाये जावें जिस से मुसाफ़िर रास्तः न भूल जावे और एक लाइटहौस की रोशनी दूसरे तक पहुंचावे और बीच में एक क़दम भी अंधेरा न रहे अब आप लोग इन सारी बातोंको सोचकर मुक्ति मार्गके बनाने का इन्तज़ाम करें महात्मा भारद्वाज जी बोले कि हे ऋषि लोगो! आप क्यों मुक्ति मार्ग के वास्ते इस क़दर तलाश और बहस कर रहे हैं वह तो परमात्मा ने सीधा रास्तः वेदमें बतला दिया है—देखो.

वेदाहमेतं पुरुषं महान्तमादित्यवर्णं तमसः पर-
स्तात्। तमेव विदित्वाति मृत्युमेति नान्यः पन्था-
विद्यतेऽयनाय ॥ ८ ॥

अर्थ—मैं इस सर्व व्यापक परमात्मा को जानूं जो सूर्य्य की तरह प्रकाश वाला और अविद्या से बिलकुल अलहिदा है उसके जानने से मुक्ति होती है दूसरा कोई मार्ग मुक्ति के वास्ते नहीं अब बतलाओ इस से और क्या साफ़ तौरपर मुक्ति मार्ग होगा तब महात्मा उद्दालकजी ने कहा कि यह तो ठीक है कि इस से बढ़कर मुक्ति मार्ग नहीं होसक्ता लेकिन आस्तिक लोग तो इस पर विश्वास करेंगे मगर नास्तिकों के वास्ते भी तो कोई इन्तज़ाम होना चाहिये जो नास्तिक वेद और ईश्वर दोनों को नहीं मानता उसके वास्ते भी ज़रूर कोई इन्तज़ाम करना चाहिये वरना सृष्टि का बहुत बड़ा हिस्सा मुक्ति

मार्ग में अलहिदा रहेगा वेद की मंजिल तक पहुंच जाने के वास्ते कुछ इन्तज़ाम ज़रूर होना चाहिये।

इस पर तमाम ऋषियों ने एक राय होकर कहा कि महात्मा उद्दालक जो बड़े दयालु हैं आप नास्तिकों पर भी दया ही करते हैं ऋषियों का सच मुच यही धर्म है नहीं तो अपने आदमियों पर तो डाकू और शेर भी दया करते हैं वे अपने बच्चों पुत्रों को नहीं मारते जो कुछ महात्मा उद्दालक जी ने कहा है उस का ज़रूर इन्तज़ाम होना चाहिये।--

तब महात्मा अत्रिजी ने कहा कि उस से पहले कि हम मुक्ति के मार्ग को तैयार करें हमें मुक्ति के स्वरूप का विचार करना ज़रूरी है क्योंकि जब तक लोग किसी वस्तु के स्वरूप को ठीक तौर पर नहीं जानते तब तक उसके हासिल करने की पूरी ख़्वाहिश नहीं होती और जबतक पूरी ख़्वाहिश न हो तब तक ठीक मुहब्बत नहीं हो सकती और बग़ैर मुहब्बत के कोई किसी मंज़िल पर पहुंच नहीं सकता इस वास्ते ऋषि मंडली को चाहिये कि पहले मुक्ति के स्वरूप को निर्णय करदें इस पर महात्मा गौतम जी बोले।

गौतमजी-हे ऋषि मंडल के महात्मा पुरुषो! मुक्ति शब्द का अर्थ तो छूटना है और छूटना उस से जिस से बंधा हो सो यह जीव दिन रात मिथ्या अभिमान और दुःखों की ज़ंजीर में बंध रहा है जीव का इस दुःख रूप बन्धन से बिल्कुल छूटना ही मुक्ति कहलाती है इस वास्ते दुःखों का बिलकुल न होना ही मुक्ति है।

अत्रिजी-दुःख जीव का स्वाभाविक लक्षण है फिर जीव इस से किस तरह पर छूट सकता है और जब स्वाभाविक गुण का नाश मानें तो गुणी का भी नाश होगा इसी वास्ते दुःख का छूटना मुक्ति नहीं:--

गौतमजी-दुःख जीव का स्वरूप लक्षण नहीं बल्कि तटस्थ है जैसे किसी ने कहा वह घर जिस पर कौआ बैठा है सीराम का घर है तो यह कौए वाला होना घर का स्वरूप लक्षण नहीं।

अत्रिजी-दुःख अगर तटस्थ है तो उस का सबब क्या है और वह किस के आधार पर रहता है जैसे रूप ज्ञान चक्षु के आधीन है ऐसे ही दुःख ज्ञान किस के सहारे पर है।

गौतमजी-जो कुछ असर प्रकृति से बज़रिये इन्द्रियों के जीवात्मा तक पहुंचते हैं उस का आधार मन है चूंकि दुःख सुख प्रकृति के पदार्थों के संयोग और अलहिदा होने से होते हैं इस वास्ते दुःख सुख का आधार

मन है जब तक मन रहता है तब तक दुःख भी रहता है जब जीव से मन का तअल्लुक़ छूट जाता है तब दुःख का तअल्लुक़ भी छूट जाता है।

ऋषि जी-मन नित्य है या अनित्य है यानी मन पैदा शुदा है या नहीं? अगर पैदा शुदा है तो उसकी पैदायश किस चीज़ से है।

महात्मा ऋषि जी के इस सवाल को सुनकर ऋषि लोगोंने बाहम विचार शुरू किया क्योंकि इस मामले में ऋषियों में मुख़्तलिफ़ ख़्याल वालों की राय में तो प्रकृति का बना हुआ था-बाज़ मन को आत्मा का गुण मानते थे और बाज़ एक अलहदा द्रव्य जानते थे इस तरह पर मुख़्तलिफ़ ख़्यालात को एक करने के वास्ते बहुत देर तक दलीलों से विचार किया। एक से एक अधिक विद्वान हरएक ब्रह्म बल से परिपूर्ण थे आख़िर दलीलों से कुछ फ़ैसला न हुआ क्योंकि दलीलों का सहारा महसूसात पर था और महसूसात का जमाना खुद मन ही से है इस वास्ते जब दलील से काम न चल सका तब श्रुति की शरण लेनी पड़ी और श्रुति ने सबकी दलीलों का फ़ैसला कर दिया जो श्रुति पेश हुई वह छान्दोग्य की श्रुति है।

अन्नमशितं त्रेधाविधीयंते तस्यय: स्थविष्ठोधातुस्तत्पुरीषंभवति यो मध्यम:तन्मांसं योऽणिष्ठस्तन्मनः॥

अर्थ—अन्न यानी खुराक खाने से उसकी ३ हालतें होती हैं उसका जो मोटा हिस्सा है वह तो पाख़ाना होजाता है जो दरमियानी हालत का है वह मांस यानी गोश्त बनता है जो सब से बारीक हिस्सा है वह मन होता है। इस श्रुति से साफ़ ज़ाहिर है कि मन ख़ुराक से बनता है अब वह नित्य किस तरह पर हो सक्ता है यानी वह तो पैदा होनेवाला और नाश होने वाला है। जिस वक़्त इस श्रुति से यह फ़ैसला होगया तब महात्मा कपिल मुनि ने कहा कि हमने तो पहले ही अपने सांख्य दर्शन में लिख दिया है कि प्रकृति का पहला कार्य यानी संसार के और पदार्थों से सूक्ष्म और प्रकृति से स्थूल मन है देखो सांख्य दर्शन अध्याय १ सूत्र १

जब मन की बाबत फ़ैसला हो चुका तब महात्मा बौधायन ऋषि ने कहा कि अगर मन को दुःख सुख का आधार मान लें तो जीवात्मा को तो बिलकुल दुःख न रहा और संसार में जीवात्मा अपने आपको दुःखी मानता है कोई नहीं कहता कि मेरा मन दुखी है बल्कि हर शख़्स यह कहता कि परमात्मा मेरे

दुःख को दूर कर दे जिससे साफ मालूम होता है कि दुःख जीवात्मा का नहीं है बोधायन जी की इस बात को सुनकर वसिष्ठ जी ने जवाब दिया कि जिस तरह संसार में किसी आदमी का धन नाश हो जाता है और वह अपने आप को दुःखी मानता है अगर विचार कर देखें तो उसे कोई दुःख नहीं हुआ लेकिन धन को अपनी आज़ादी का सबब मानता था और धन के नाश होने से उसको आज़ादी नाश होने इस ख्याल से उनको दुःख मालूम होने लगा। वसिष्ठ जी ने कहा हमें यह भी विचार करना चाहिये कि निराकार और चेतन्य जीवात्मा का संसार के साथ क्या तअल्लुक है जब गौर से देखा जावे तो साफ मालूम होता है कि सिवाय अहङ्कार के और किसी किस्म का तअल्लुक हो नहीं सक्ता, जब अहंकार का तअल्लुक है तो उसका सुखी दुःखी होना सिर्फ अज्ञान मात्र है जब गौर से देखते हैं तो यही हाल हमें संसार भर में नज़र आता है अभी दो भाई हैं उनमें प्यार है एक को तकलीफ से दूसरे के दिमाग तक तकलीफ पहुंच रही है थोड़ी देर में उनमें बाहम झगड़ा हो जाता है तो एक को दूसरा अपने हाथ से कतल कर देता है अब उसे भाई के मार डालने की ज़रा भी तकलीफ और दर्द नहीं मालूम होता जिस भाई की ज़रा सी तकलीफ से वह घबरा जाता था आज उसको अपने हाथ से कतल करते वक्त रहम नहीं आता। इसी तरह अब एक आदमी बाहिर से आता है हमारे दिल में उसका ज़रा एतबार नहीं उसके आराम से हमें आराम से नहीं और उसकी तकलीफ से हमें तकलीफ नहीं कुछ रोज़ पास रहने से उससे हमें प्यार हो जाता है कि जिस प्यार के होने से उसकी ज़रा सी भी तकलीफ हमें बेचैन कर देती है इस किस्म की हालत रोज़ मर्रह देखने से हर शख्स को मालूम हो जायगा कि दुनिया में जीवात्मा का तअल्लुक सिर्फ अज्ञान का है जिसको दोस्त माना उसकी तकलीफ में तकलीफ उसके आराम में आराम और जिसको दुश्मन समझा उसके दुःख से आराम और आराम से तकलीफ होती है। चूंकि जीवात्मा ने अविद्या के सबब मन इन्द्रिय और शरीर को अपना मान लिया है इसवास्ते इनको तकलीफ से उसे तकलीफ मालूम होती है और इनके आराम से उसे आराम मालूम होता है।

जब वसिष्ठ जी ने यह बातें कहीं तो ऋषियों को यह विचार पैदा हुआ कि अकेले ईश्वर के जानने से वेद मन्त्र मुक्ति बतलाता है तो संसार में क्या और क्रिया की ज़रूरत है। या नहीं? इस विचार में पड़कर सब ने देखा कि पहले मालूम करना चाहिये कि संसार में अनादि पदार्थ कितने हैं इसमें एक अद्वैत वादी ने कहा कि श्रुति में लिखा है:—

एकमेवाद्वितीय ब्रह्म।

यानी एक ही ब्रह्म है दूसरा कोई नहीं इसवास्ते जब ब्रह्म ही सत् पदार्थ है तब उसके ज्ञान से ही मुक्ति होगी क्योंकि तब ज्ञानी को सिवाय ब्रह्म के दूसरा नज़र नहीं आवेगा।

द्वैतवादी-श्रुति साफ तौर पर यह बतलाती है।

अजामेकांलोहितशुक्लकृष्णांबह्वीः प्रजाःसृज्यमानांसरूपाः।
अजोह्येकोजुषमाणोऽनुशेतेजहात्येनांभुक्तभोगामजोऽन्यः॥

अर्थ—एक अज यानी पैदाइश से रहित चीज़ है जिसमें रजोगुण, तमोगुण सतोगुण पाये जाते हैं और उसके सबब से यह संसार के मुख्तलिफ किस्म के शरीर बने हैं और एक दूसरी गैर मख्लूक चीज़ है जो संसार के अन्दर रहकर उसके भोगों को भोगती है और तीसरी एक गैर मख्लूक चीज़ है जो उसमें रहती है लेकिन उसको नहीं भोगती। इससे साफ पाया जाता है कि जीव, ब्रह्म, प्रकृति तीनों गैर मख्लूक हैं इसके बाद एक ने कहा वेद में भी लिखा है:—

द्वासुपर्णासयुजासखायासमानं वृक्षंपरिषस्वजातेतयोरन्यःपि-
प्पलंस्वाद्वत्त्यनश्नन्न्यो ऽभिचाकशीति॥६॥

अर्थ—दो परन्द हैं जो हमेशा साथ २ रहते हैं और उनमें दोस्ती भी है दोनों परन्द एक ही दरख्त पर बैठे हैं एक परन्द तो उस दरख्त के फलों को खाता है लेकिन दूसरा परन्द उसके फलों को छूता तक नहीं।

इस मंत्र से साफ तौर पर पाया जाता है कि जीव और ब्रह्म दोनों परन्द प्रकृति के दरख्त पर कयाम पज़ीर हैं, जीव तो प्रकृति के विषयों को भोगता है लेकिन ब्रह्म इससे बिल्कुल अलैहदा है।

अद्वैतवादी-इस मन्त्र का यह अर्थ नहीं बल्कि यह अर्थ है कि संसार में दो किस्म के जीव हैं एक तो ज्ञानी दूसरे अज्ञानी—अज्ञानी तो संसार के दुःखों को भोगते हैं ज्ञानी बिल्कुल नहीं भोगते।

द्वैतवादी—अगर तुम्हारा अर्थ ठीक मान लिया जावे तो ज्ञानी और अज्ञानी का संग होना चाहिये जो बिल्कुल नहीं होता और न इनमें दोस्ती होती है और तुम्हारे अद्वैत वाद में तो पक्षी और दरख्त दो भी नहीं हो सके क्योंकि दोनों विजाति यानी मुख्तलिफ किस्म के हैं।

अद्वैतवादी-अभी तुम हमारे सिद्धान्तों को समझते नहीं—व्यवहार की हालत में हम ऐसे दृष्टान्तोंको मानतेहैं यथार्थमें यह सब मिथ्या है।

द्वैत वादी-एक ही ब्रह्म से मुखालिफ किस्म की सृष्टि पैदा नहीं हो सकी क्यों कि जब तक मुखालिफ सिफात नहीं तब तक अनेकदगी नहीं होसकी और जगत में तो एक दूसरे की मुखालिफ चीजें यानी मुतज़ाद चीजें ही नज़र आती हैं और किसी एक चीज़ में मुतज़ाद सिफतें नहीं रहतीं जैसे अग्नि जलाती है और पानी ठंडा करता है अग्नि फैलाती है और पानी जमाता है हवा चलाती है और पृथ्वी सकोड़ती है इस किस्म की मुतज़ाद सिफतें एक ही ब्रह्म में नहीं हो सक्तीं।

अद्वैतवादी-अजी महाराज यह तो सब मिथ्या है और हम ब्रह्म से सृष्टि नहीं मानते हैं बल्कि ईश्वर से उत्पत्ति मानते हैं क्योंकि वेदान्त में यह लिखा है:-शुद्ध ब्रह्म, ईश्वर, जीव, माया, अविद्या, और इन सबका ताल्लुक ये छे अनादि हैं, हम लोग ईश्वरसे जगत उत्पत्ति मानते हैं।

द्वैत वादी-तुम इन सब को अलग २ तारीफ करो जिस से तुम्हारी ग़लती खुद ब खुद निकल आवेगी क्योंकि व्यास जी वेदान्त सूत्रमें ब्रह्म ही को जगत का कर्त्ता मानते हैं जैसा कि लिखा है:--

जन्माद्यस्ययतः।

यानी जिस ब्रह्मसे इस जगत की पैदायश और क़याम वग़ैरह होते हैं।

अद्वैतवादी-ब्रह्म तो सच्चिदानन्द स्वरूप और शुद्ध निराकार अनादि और अनंत है लेकिन ईश्वर माया सहित चेतन को कहते हैं और अविद्या से युक्त चेतनको जीव और शुद्ध सत्व प्रधान को माया और मलिन सत्व प्रधान को अविद्या कहते हैं और ये सब अनादि चीजें हैं लेकिन ब्रह्म के सिवाय सब का अन्त है क्योंकि ये सब अनादि और अन्त वाली हैं और ब्रह्म अनादि और अनन्त है।

द्वैतवादी-जब तुम ईश्वर और माया को अलग मानते हो और साथ २ यह भी कहते हो कि माया सहित चेतन को ईश्वर कहते हैं यानी जब चेतन और माया का संयोग हो तब उसकी ईश्वर संज्ञा हुई। अब ज़रा इसे सोचो कि जो संयोग यानी तरकीबसे पैदा हुआ है वह अनादि किस तरह है और ऐसाही तुम्हारा जीव है वह संयोग से बना है इस तरह तुम्हारे छे अनादि तो नरहे और न तुम सम्बन्ध को अनादि कह सक्ते हो क्योंकि सम्बन्ध की तारीफ से टपकता है कि वह

किसी वक्त हुआ इसवास्ते तीन अनादि रहगये। अब ज़रा ग़ौर से सोचो कि अनादि और सांत कैसे हो सक्ता है इसमें दृष्टान्त का बिलकुल अभाव है क्योंकि एक किनारह वाला दर्या संसार में कहीं नज़र नहीं आता इससे तुम्हारा मत अविद्या जनक मालूम होताहै।

अद्वैतवादी-यह लोग जो कुछ कह रहे हैं सब व्यवहार दशा है और व्यवहार दशा में जो कुछ नज़र आता है वह सब मिथ्या है क्योंकि लिखाहै।

आदावन्तेचयन्नास्ति वर्त्तमानेपितंतथा।

अर्थ—जो आदि और अन्तमें नहो अर्थात पहले भी न हो और आखिरमें भी न रहे वह स्वप्नके पदार्थों की तरह दरम्यान हाल में भी नहीं होती।

द्वैतवादी-तुम्हारे तो छे पदार्थ अनादि हैं और हाल में भी मौजूद हैं तो इन को किस तौर पर मिथ्या कह सक्ते हो क्योंकि तुम्हारे श्लोकका तो यह कहना है कि जो आदि और अन्तमें न हो वहां तो आदि में है इस वास्ते तुम्हारा जीव ईश्वर को मिथ्या बताना ठीक नहीं या तो तुम उनको अनादि न मानो या अन्त न मानो तुम्हारी बातें बिलकुल तर्क को बरदाश्त नहीं कर सक्तीं ऐसी बे दलील बातोंको कोई अक़लमन्द तसलीम नहीं कर सक्ता।

अद्वैतवादी-तुम्हारे तसलीम न करने से हमारा कोई हर्ज नहीं लेकिन इसके यह मानी नहीं कि अद्वैतवाद जिसके वास्ते सैकड़ों श्रुति प्रमाण दिये जा सकते हैं जिसको भगवान शंकराचार्य्य जो साक्षात शिवरूप थे शहादत दे रहे हैं सिर्फ तुम्हारे जैसे भेदवादियोंके न माननेसे कभी ग़लत होसक्ता है। हां सुनाे अगर तुम चित सुखी और अद्वैत सिद्धि भेद धिक्कार वग़ैरह ग्रन्थों को पढ़ो तो तुमको मालूम हो कि अद्वैतवाद ठीक सिद्धान्त है और बाक़ी शास्त्र तब ही तक काम देते हैं जब तक वेदान्ती मौजूद नहीं होता देखो लिखा है—

तावत्गर्जन्तिशास्त्राणि जम्बुकाविपनेयथा।
यावन्नगर्जतिमहा शक्तिर्वेदान्तकेसरी॥

अर्थ—जैसे जंगल में गीदड़ तब तक गर्जते हैं जब तक शेर नहीं बोलता ऐसे ही जब तक वेदांत जो एक बड़ी ताक़त वाला शेर है नहीं बोलता तभी तक और शास्त्र गर्जते हैं।

द्वैतवादी–अगर हमारे तसलीम न करने से अद्वैतवाद ग़लत नहीं होता तो तुम्हारे नहीं कहने से नहीं भी नहीं होसकता। बड़ी समाधी की बात है तमाम वेद और शास्त्रों से द्वैतवाद साबित है न्याय, वैशेषिक, सांख्य, योग, मीमांसा के बनानेवाले महामुनि गौतम, कणाद कपिल और जैमुनि जी ने अपने २ शास्त्रों में बहुत से प्रमाण और दलील देकर साबित कर दिया है कि द्वैतवाद ठीक है अगर्चे उपनिषद और वेदान्त शास्त्रका सिद्धान्त भी अद्वैत है जैसा कि रामानुज और बोधायन वगैरह महात्माओं के भाष्य से मालूम होता है लेकिन महात्मा शङ्कराचार्य ने जिन्होंने बौद्धमत को निर्मूल करनेका बीड़ा उठाया था अपने मुख़ालिफ़को दबाने के वास्ते बहुत से वेद मंत्रों अर्थात् श्रुतियों और सूत्रों का अर्थ बदल दिया है।

अद्वैतवादी–क्यों ख़्वाहमख़्वाह महात्मा लोगों पर मिथ्या दोष लगाकर नर्क में जाने का इन्तज़ाम करते हो और इस किस्म के वैराग्य वाले महात्माओं पर जिनको संसार में किसी से ग़रज़ न थी और जिन्होंने संसार के उपकारमें अपना जीवन खर्च कर दिया हो कोई भी इस किस्मका इलज़ाम लगा सकता है-रामानुज वगैरह दुनियादार थे उन्होंने अपना मतलब हासिल करनेके वास्ते अर्थ बदले हैं-अगर तुम्हारे पास कोई सबूत हो तो पेश करो वरने आइन्दा कान को हाथ लगाओ कि फिर कभी ऐसे महात्माओं की निन्दा न करेंगे।

द्वैतवादी–अव्वल तो महात्मा गौतम जी ने अपने शास्त्रमें लिखा है कि जिस पुस्तक में झूंठ या मुतज़ाद और तकरार हो वह पुस्तक प्रमाण नहीं होता और तुम्हारे अर्थ से बहुत से वेद मंत्रों और श्रुतियों के साथ मुख़ालिफ़त होने से मुतज़ाद होकर उपनिषदों का प्रमाण ही नहीं रहता और हमारे अर्थों से किसी श्रुति से साफ़ २ ज़िद नहीं जिस से मुतज़ाद होकर उपनिषदों की सचाई पर इलज़ाम आये दूसरे पद्म पुराण में व्यास जी ने बहुत से श्लोक शिव गौरी के नामसे के लिखे हैं जिस का हवाला विज्ञान भिक्षु ने अपने सांख्य दर्शन के सांख्य प्रवचन भाष्य की भूमिका में भी दिया है जिससे साफ़ मालूम होता है कि माया वाद यानी अद्वैतवाद बिलकुल असत् शास्त्र और पोशीदा तौर पर नास्तिक है।

अब हम उन श्लोकों को पेश करते हैं जिन से अद्वैतवाद का मिथ्या

होना और वेद का अर्थ उलटा करना साफ़ तौरपर मालूम होजायगा

मायावादमसच्छास्त्रं प्रच्छन्नं बौद्ध मेवच।
मयैव कथितं देवि कलौ ब्राह्मण रूपिणा॥

मायावाद नवीन वेदान्त या अद्वैतवाद बिलकुल झूठा शास्त्र और पोशीदा तौर बौद्ध है और आगे जाकर लिखते हैं कि हे देवी मैंने जो कलियुग में ब्राह्मण रूप धारण करा है क्या आप नहीं जानतीं कि स्वामी शंकराचार्य लोग शिवजी का औतार कहते हैं और वह ब्राह्मण भी थे और कलियुग में सिवाय उनके कोई दूसरा शिव का औतार प्रसिद्ध नहीं इससे मालूम होता है कि पद्म पुराण वाले का मतलब साफ़ तौरपर यह है कि स्वामी शंकराचार्य ने इस नास्तिक शास्त्रको बनाया है।

अद्वैतवादी–माया वादसे मतलब वेदान्तशास्त्रसे नहीं बल्कि कोई नास्तिक शास्त्र होगा जो कि बौद्धों ने बनाया होगा–जबतक कोई साफ़ प्रमाण न मिले तब सिर्फ़ मायावाद लफ़्ज़ से अद्वैतवाद को जिसको आज सारे विद्वान मान रहे हैं मिथ्या कहना ठीक नहीं क्योंकि कोई बुद्धिमान पुरुष बिना ठीक २ सबूत के नहीं मान सकता।

द्वैतवादी–महाशय आगे पद्म पुराण में इसकी तशरीह भी कर दी है कि माया वाद शास्त्र में क्या है–इस वक्त आपको घबड़ाने की कोई ज़रूरत नहीं लीजिये प्रमाण:—

अपार्थं श्रुतिवाक्यानां दर्शयल्लोकगर्हितम्।
कर्मस्वरूपत्याज्यत्वमत्र च प्रतिपाद्यते॥ २॥
सर्वकर्मपरिभ्रंशान्नैष्कर्म्यं तत्र चोच्यते।
परात्मजीवयोरैक्यं मयात्र प्रतिपाद्यते॥ ३॥
ब्रह्मणोऽस्य परं रूपं निर्गुणं दर्शितं मया।
सर्वस्व जगतोऽप्यस्य नाशनार्थं कलौ युगे॥४॥
वेदार्थवन्महाशास्त्रं मायावादमवैदिकं।
मयैव कथितं देवि जगतां नाशकारणात्॥५॥

२ अर्थ–वेद के लफ़्ज़ोंका अर्थ बदल कर और संसार की दुनियोंको मिलाकर मैंने इस शास्त्रका कर्मको बिलकुल छोड़कर निष्कर्म होने

का उपदेश किया है और कर्म को जड़ से अलग कर दिया है।

३ अर्थ-सब कर्मों को त्यागकर एक निष्कर्म होना और परमात्मा और जीवात्मा की एकता मैंने इन मायावादों में साबित की है यानी जीव और ब्रह्म को एक बतलाया है।

४ अर्थ-और इसमें ब्रह्म का निर्गुण रूप जगत के नाश करने के वास्ते मैंने कलियुग में दिखला दिया।—

५ अर्थ यह शास्त्र बिल्कुल वैदिक मुवाफ़िक ज़ाहिरा मालूम होता है लेकिन असल में अवैदिक यानी वेद का मुखालिफ़ है और इसको मैंने ही जगत के नाश के वास्ते बनाया है महाशय इससे बढ़कर और क्या प्रमाण होगी।

अद्वैतवादी-पद्म पुराण के ये श्लोक किसी तरह भी प्रमाण नहीं हो सकते क्यों कि जहां तक ग़ौर किया जाता है उस के मतलब से मालूम होता है कि किसी द्वैतवादी ने मिला दिये हैं क्योंकि बुद्ध और शंकराचार्य दोनों व्यासजी से बाद में हुये हैं और यहां श्लोकों से मालूम होता है कि व्यास, बुद्ध और शंकराचार्य से बाद पैदा हुये क्यों कि जिस कदर किया है इन श्लोकों में सब ज़माने गुज़िश्तः की बाबत और यह मुमकिन नहीं कि व्यास जैसा बुद्धिमान किस तरह से ग़लती करके भविष्यत की जगह भूत लिख जावे दूसरे व्यास जी ने अपनी भागवत के ग्यारहवें स्कन्ध में भी तो इसी अद्वैतवाद का ज़िक्र किया है क्योंकि बमूजिब इस रवायत के कि अठारह पुराण व्यास ने बनाये और पद्म पुराण में भागवत के ख़िलाफ़ लिखा चूंकि व्यास के वाक्य में परस्पर विरोध मौजूद है और वह बमूजिब गौतम सूत्र और अक्ष पाद के किसी तरह सबूत में नहीं लिया जा सकता इस वास्ते यह तुम्हारा प्रमाण ठीक नहीं।

द्वैतवादी-अगर्चे पुराणों में इख़्तलाफ़ है जैसा कि तुम बतला रहे हो लेकिन पुराणों को सब विद्वान सही तसलीम कर चुके हैं और तमाम पंडित अब भी मानते हैं और व्यास जी से विद्वान ऋषि का कहना कभी ग़लत होही नहीं सकता इस वास्ते तुम को इन श्लोकों को मानना पड़ेगा दूसरे सांख्य दर्शन के भाष्य करने वाले विज्ञानभिक्षु जैसे विद्वान ने भी इसको सही तसलीम कर लिया है इस वास्ते तुम्हारा इस पर एतराज़ करना ठीक नहीं।

अद्वैतवादी-पुराणों में रोचक यानी तरग़ीब दिलाने वाले और भयानक यानी ख़ौफ़ दिलाने वाले वाक्य हैं इसवास्ते पुराण पूरे तौर पर प्रमाण नहीं हो सकते। यथार्थ उपदेश तो वेदांत के ग्रन्थों में ही है जो वेदान्त के सारे ग्रंथ अद्वैतवाद को साबित कर रहे हैं और तुम्हारे श्लोक तो शङ्कराचार्य के होने के बाद किसी मज़हब के मुख़ालिफ़ जैनी वग़ैरह के मिलाये हुये मालूम होते हैं।

द्वैतवादी-तुम्हारे वेदान्त के ग्रन्थ तो दावा है देखना यह है कि अद्वैतवादियों ने अर्थ ठीक किया है या द्वैतवादियों ने इसवास्ते वेदांत ग्रन्थों को छोड़कर दूसरे शास्त्रों की शहादत दीजिये। चूंकि बाक़ी सब शास्त्र द्वैतवाद को सत्य मानते हैं इससे साफ़ ज़ाहिर है कि द्वैतवाद ही वेद का सिद्धान्त है और बमूजिब इन श्लोकों के जो ऊपर लिखे गये अद्वैतवादियों ने अर्थ बदल कर अपना काम चलाया है और शङ्कराचार्य से पहले अद्वैतवाद का कहीं पता भी नहीं मिलता।

अद्वैतवादी-गीता में (जो महाभारत का एक हिस्सा है) जिसको महात्मा कृष्ण ने अर्जुन को उपदेश किया है अद्वैतवाद को ठीक बतलाया है और महाभारत को महात्मा व्यास ने बनाया है इस वास्ते वेदान्त सूत्र और गीता का बनाने वाला एक है जब गीता का सिद्धान्त अद्वैतवाद है तो वेदांत का सिद्धान्त भी अद्वैतवाद ही समझना चाहिये।

द्वैतवादी-महाभारत और गीता में भी बहुत सा मिलाया हुआ है इसवास्ते वह खुद प्रमाण के मुहताज हैं और चूंकि शंकराचार्य गीता को भी वेदांत समझकर उसका भाष्य भी कर गये हैं इससे गीता प्रायः खुद बहस में शामिल है वह किस तरह प्रमाण तसलीम की जा सकती है।

जब द्वैतवादी और अद्वैतवादी का झगड़ा बहुत बढ़ गया और एक दूसरे को बुरा भला कहने लगे तब महात्मा तत्ववेत्ता ऋषि जी बोले कि सुनो महाशय यह सभा ऋषियों की धर्म चर्चा के वास्ते है न कि अपनों के युद्ध करने वास्ते यहां पक्ष और हार जीत का ख़याल छोड़ देना चाहिये। मेरे नज़दीक तुम लोग बे फ़ायदा झगड़ा कर रहे हो असल में द्वैतवादी और अद्वैतवादी में कुछ फ़र्क़ नहीं सिर्फ़ अवस्था का फ़र्क़ है द्वैतवादी जाग्रत अवस्था में है अद्वैतवादी सुषुप्तावस्था में है। द्वैतवादी को ज्ञान है वह अपने माबूद को अपने से अलग समझता है उसे अपना और ईश्वर दोनों का ज्ञान

है अद्वैतवादी का ज्ञान ब्रह्म की भक्ति और ब्रह्म ने ढाँप लिया है यही अज्ञानी और पराई कुछ सुध नहीं केवल आनन्द ही आनन्द नज़र आता है और आनन्द ही ब्रह्म का रूप है अद्वैतवादि. उस आनन्द में मग्न होकर सारे संसार में आनन्द रूप ब्रह्म को हर जगह मौजूद देखता है तब यह कहता है " अयमात्मा ब्रह्म" यानी यह जो मेरे अन्दर मौजूद है येही ब्रह्म है उसका यह कथन खुदग़र्ज़ी या किसी और सबब से नहीं बल्कि अपने दिल और ख़यालात में सिवाय ईश्वर के किसी दूसरी चीज़ के न रहने से उसको सिवाय ईश्वर के कोई दूसरा मालूम नहीं होता और वह ईश्वर के अखे प्रेम में ऐसा लीन होता है कि दीन व दुनिया से बिल्कुल बे ख़बर हो जाता है और इसवास्ते महात्मा कपिल जी ने अपने सांख्य शास्त्र में लिखा है:—

समाधि सुषुप्ति मुक्तिषु ब्रह्मरूपिता ।

अर्थ-यानी समाधि, सुषुप्ति और मुक्ति ये तीन हालतें ऐसी हैं कि जिनमें जीव को सिवाय ब्रह्म के दूसरे का ज्ञान नहीं होता और इन तीन हालतों में जीवात्मा अपने आपको आनन्द स्वरूप परमात्मा में मग्न होने से आनन्द से भरपूर ही महसूस करता है क्योंकि उस वक़्त प्राकृत मन और इन्द्रियों की अलैहदगी से उसे सिर्फ परमात्मा का ही बोध होता है और परमात्मा की उपासना से आनन्द से पूर्ण होकर वह जीवात्मा जो कि सत् चित् स्वरूप तो पहले ही था अब आनन्द की प्राप्ति से सच्चिदानन्द होजाता है लेकिन फ़र्क सिर्फ इतना रहता है कि परमात्मा स्वाभाविक सच्चिदानन्द है और जीवात्मा सत् चित् स्वाभाविक और आनन्द परमात्मा के सबब से है जैसे जल अग्नि के संयोग से गर्म होजाता है और उस वक़्त अग्नि की तरह गर्म मालूम होता है लेकिन यह गर्मी उसकी स्वाभाविक नहीं बल्कि अग्नि के सबब पैदा हुई जिस तरह अग्नि के स्पर्श से लकड़ी कपड़ा वग़ैरह जल उठता है इस तरह गर्म जल के स्पर्श से नहीं जलता है क्योंकि उस जल में बावजूद गर्मी के और के भी जल का सीतलपन जो स्वाभाविक गुण है मौजूद रहता है, अगर्चे अग्नि की ज़बर्दस्त ताक़त उस सर्दी को महसूस नहीं होने देती लेकिन उसका अभाव नहीं होजाता और न वह जल स्वाभाविक गर्म कहला सक्ता है ऐसी हालत में अलैहदगी और एकता का पहचानना विचार वाले आदमियों का काम है और जो लोग माया और अविद्या के स्वरूप पर ऐतराज़ करते हैं उसका सबब सिर्फ ग़लत फ़हमी है वरना सब शास्त्रों में यह बात क़ाबिल तसलीम है और किसी न किसी शब्द से हर एक ने इसको लिया है। अविद्या का लक्षण यह कहा जाता

है (मलिन सत्व प्रधान) और माया का (शुद्ध सत्व प्रधान) अब देखना चाहिये कि प्रधान तो प्रकृति का नाम है यह तो माया और अविद्या दोनों में मौजूद है सत्व कहते हैं तीन काल में रहने वाले को चूंकि प्रकृति भी यानी तीन काल में रहनेवाली है इसवास्ते माया और अविद्या में सिर्फ शुद्ध और मलिन का फ़र्क रहा और यही वेदान्त के जीव और ईश्वर का फ़र्क है क्योंकि जब ये लक्षण करते हैं "कार्योपाधि संयुक्त" जीव और "कारणोपाधि संयुक्त" अर्थात् जिसको कारण उपाधि से तअल्लुक़ है उसे ईश्वर कहते हैं और जिसको कार्य रूप उपाधि से तअल्लुक़ है वह जीव है उपाधि कौन-है वही प्रधान अर्थात् प्रकृति अब यहां शुद्ध की जगह कारण और मलिन की जगह कार्य का शब्द आया है चूंकि कारण रूप प्रकृति से मिथ्या ज्ञान नहीं पैदा होता इसवास्ते वह बन्धन का सबब नहीं और वह बद्ध जीवों को मालूम ही नहीं होती इसवास्ते उसका तअल्लुक़ सिर्फ मुक्त जीवों से रहता है और कार्य रूप प्रकृति जिसका नाम विकृति है जो मुख़्तलिफ़ क़िस्म के रंग रूप को धारण करके संसार में मौजूद है इसका तअल्लुक़ बद्ध जीवों से है क्योंकि यह इन्द्रिय से प्रत्यक्ष होती है और जिसका इन्द्रिय न हो इसका ज्ञान नहीं होता इसवास्ते यह बन्धन का सबब और कार्य उपाधि कहलाती है अब साफ़ मालूम हुआ कि माया और अविद्या प्रकृति की दो हालतों का नाम है जीव और ईश्वर जीव की दो हालतों का नाम है यानी मुक्त जीव ईश्वर हो जाता है और बद्ध जीव जीव कहलाता है और कारण रूप प्रकृति माया कहलाती है और कार्य रूप प्रकृति अविद्या कहलाती है। अब सवाल यह बाक़ी रहा कि वेदान्ती लोग छे पदार्थों को अनादि मानते हैं और पांच को अनादि सांत और एक को अनादि अनन्त मानते हैं इसका सबब यह है कि कभी तो जीव ईश्वर हो जाता है और कभी ईश्वर जीव होता है यानी कभी मुक्त जीव बन्धन को प्राप्त होजाता है और कभी वही जीव मुक्ति को हासिल करके ईश्वर होजाता है। चूंकि जीव के बन्धन और मुक्ति दोनों का अन्त है इसवास्ते जीव ईश्वर दोनों सान्त हैं लेकिन चूंकि यह सिलसिला कि कभी जीव बद्ध हो और कभी मुक्त हो अनादि है इसवास्ते जीव और ईश्वर प्रवाह से अनादि हैं. ऐसे ही प्रकृति का हाल है कि कभी वह विकृति हो जाती है और सृष्टि में मुख़्तलिफ़ क़िस्म के रंग और रूप में नज़र आती है और कभी फिर प्रकृति रूप होजाती है जब कि रंग रूप का बिल्कुल ज्ञान नहीं होता इसवास्ते प्रकृति की ये दोनों हालतें भी सान्त हैं और ये दोनों हालतें प्रवाह से अनादि हैं क्योंकि इनकी

आग़ाज़ का कोई वक़्त नहीं जो माना इसवास्ते इनको भी अनादि माना कहा गया कि ये स्वरूप से अन्त वाले हैं और प्रवाहसे अनादि होनेसे अनादि माना गया अब रहा इनका तअल्लुक़ सो कभी जीव प्रकृति से तअल्लुक़ पैदा करता है और कभी उसका नाश होजाता है और कभी प्रकृति कारण रूप होती है और कभी कार्य रूप इसवास्ते यह तअल्लुक़ भी अन्त वाला है और प्रवाह से यह भी अनादि है क्योंकि इस का आग़ाज़ भी बुद्धि की शक्ति से बाहर है।

सवाल—महाराज आप जो कहते हैं प्रवाह से अनादि और स्वरूप से आदि है इस का मतलब हमारी समझ में नहीं आया आप इस को साफ करदें।

जवाब तत्ववेत्ता—प्रवाह कहते हैं सिलसिले को जैसे रातके बाद दिन और दिन के बाद रात होती है कोई अक़्लमन्द साबित नहीं कर सक्ता कि यह सिलसिले कब शुरू हुआ लेकिन आजका दिन शुरू हुआ और छिप गया इसका आदि और अन्त जानते हैं यह स्वरूप कहलाता है अब तुम समझ गये होगे कि सिलसिले से तो जीव और ईश्वर, माया और अविद्या और इनका तअल्लुक़ अनादि है और स्वरूप से सब सान्त हैं क्योंकि इनका अन्त होजाता है सिर्फ ब्रह्म एक ऐसा है जो प्रवाह के तअल्लुक़ से अलेहदा है वह स्वरूप से अनादि और अनन्त है।

सवाल—तो महाराज लोगों ने जो ये झगड़े डाल रक्खे हैं और एक दूसरे से लड़ रहा है इस का क्या सबब है क्योंकि हम बहुत से ऐसे लोगों को भी जो दुनियावी झगड़ों से बिल्कुल अलेहदा हैं और धर्म के ख़यालमें मस्त हैं जिनको ख़ुदग़र्ज़ी नफ़सानी बिल्कुल ध्यान नहीं दिन रात झगड़ा करते देखते हैं। अगर्चे हमारे ख़याल में दुनियादारी के झगड़े ख़ुद ग़र्ज़ी के सबब से हैं लेकिन ऐसे लोगों के झगड़ों का क्या सबब है?

जवाब—अविद्या ही संसार में सारे झगड़ोंका मूल है क्योंकि सारे जीव सुख चाहते हैं लेकिन अविद्या के सबब से उस के साधनों का ठीक नहीं रखते इस वास्ते हर एक अल्पज्ञ जीव अपने तरीक़े को अच्छा दूसरे आनु को ग़लत बतला रहा है।

सवाल—महाराज मूर्ख लोग ही ऐसा नहीं करते बल्कि बड़े २ पंडित, मौलवी और आलिम लोग जो अपने को सब शास्त्रों का जानने वाला कहते हैं वे भी झगड़ा कर रहे हैं इस से मालूम होता है कि

अविद्या के सिवाय और भी कोई सबब है बल्कि वे लोग यहां तक कहते हैं कि शास्त्रों में भी झगड़ा है एक शास्त्र दूसरे का खण्डन करता है नैयायिक लोग वेदान्तियों को झूठा बतलाते हैं और वेदान्ती लोग नैयायिकों को नास्तिक कहते हैं।

जवाब—यह सब भी अविद्या और शास्त्रोंको ठीक तौरपर न जाननेका सबब है क्योंकि शास्त्रों में बिल्कुल झगड़ा नहीं है सब शास्त्र एक मत हैं अलबत्ते उनकी परिभाषा अलग २ है वे मुख़्तलिफ़ हालतों का वर्णन करते हैं लेकिन मनशा मतलब और उसके प्राप्ति के उपाय सब एक ही हैं। ये जिस क़दर झगड़े हैं सब अविद्याके सबब से हैं वरने सब शास्त्र एक मत हैं।

सवाल—महाराज आप क्या कहते हैं ऐसे २ पण्डित जिनकी ज़बान पर वे शास्त्र मौजूद हैं अगर मौक़े पड़े तो कुल शास्त्रों को सिलसिलेवार लिखकर प्रकाश करदें। जब वे लोग शास्त्रार्थ के वास्ते बैठते हैं तो कई दिन तक बराबर शास्त्रों के मज़ामीन पर बहस करते हैं लेकिन ऐसे लोगोंके शास्त्रार्थों का परिणाम सिवाय तू तू मैं मैं के कुछ नहीं देखा आख़िर में ग़ुस्से में भर कर उठ खड़े होते हैं।

जवाब—जो लोग शास्त्रों के अर्थ को ठीक २ समझते हैं वे तो कभी झगड़ा ही नहीं करते और तुम जो कहते हो कि वे शास्त्र उनकी ज़बान पर हैं और वे शास्त्रार्थ करते वक़्त आपस में लड़ते हैं वे दर हक़ीक़त शास्त्री तोते हैं जिन्होंने शास्त्रों अलफ़ाज़ तो हिफ़्ज़ कर लिये हैं लेकिन वे उनकी व्यवस्था करना नहीं जानते इसी वास्ते उनके दिल में हार जीत का ख़याल दिन रात लगा रहता है और वे शास्त्री तोते पक्षी होकर अपने २ पक्ष पर लड़ते हैं लेकिन इनके सबब से जिस क़दर शास्त्रोंकी हिफ़ाज़त होती है उससे ज़ियादह उन झगड़ों से शास्त्रों की निन्दा होती है हमारे ख़याल में वे बहुत बड़ी अविद्या में पड़े हुए हैं।

सवाल—महाराज आप कहते हैं वे व्यवस्था करना नहीं जानते हैं लोग तो रात दिन व्यवस्था देते हैं देखिये कायस्थों को क्षत्रिय बना दिया ऐसी ही सैकड़ों व्यवस्था काशी के पंडित जो इस ज़माने में सारे मुल्क में विद्वान गिने जाते हैं बराबर दे रहे हैं आज एक और भी

बात सुनी है कि काशी के एक विद्वान महामहोपाध्याय ने ब्रह्म के साकार होने की व्यवस्था दी है।

जवाब—ये लोग बहुत बड़ी अविद्या में फंसे हुए हैं इन्होंने धर्म कर्म को टकों के हाथ बेच दिया है क्या वह बिना कुछ लिये कभी व्यवस्था देते हैं अगर कहो कि दक्षिणा लेते हैं तो बस यही तो इन्ही लोगों ने धर्म का नाश कर दिया है क्योंकि जो ज़ियादह रुपया दे उसीकी तरफ़ की व्यवस्था दे देते हैं ये लोग बिलकुल मूर्ख हैं जो इन पण्डितों का विश्वास करते हैं ये लोग अपने पुत्र के वास्ते ईश्वर का साकार तो किया अगर ईश्वर का अभाव भी साबित करें तो कोई ताज्जुब की बात नहीं असल तो इनको संस्कार जन्य अविद्या हो लगी रहती है जिसके सबब से इन्हें धर्म अधर्म कुछ भी नहीं सूझता जिस सम्प्रदाय और मतके संस्कार पड़गये हैं अपनी झूठी सच्ची दलीलोंसे जिस तरह से होसका है उसकी पुष्टि करते हैं और संसार में रुपयेही को अपने जीवन का उद्देश्य समझते हैं बेचारे क्या करें दरिद्र ब्राह्मणों के लड़के जिनको बाल्य और युवा अवस्थामें तो रुपया मिला नहीं सिर्फ़ बनियोंकी रोटियोंसे पेट पालते हैं और तालीम पाते हैं मन्दिरों में घूमने और भांग पीनेका अभ्यास भी साथही हो जाता है जिससे उनकी बुद्धिमें अविद्या बराबर असर करती चली जाती है इधर तो लोग शास्त्र पढ़े हुए अनित्य में नित्य बुद्धि और दुःख में सुख बुद्धि और अशुचि में शुचि बुद्धि और अनात्मा में आत्म बुद्धि करना अविद्या समझते हैं उधर खुद अनात्मा और पाषाण में आत्म बुद्धि करते हैं इस वास्ते इस क़िस्म के मिले हुए संस्कारों से उन के आत्मा की विचार शक्ति बिल्कुल नष्ट हो जाती है और ये धर्म और अधर्म के ख़याल को छोड़ कर हार जीत और प्रतिष्ठा और लोभ में अपना जीवन खो देते हैं।

सवाल—महाराज इनमें बहुत से लोग तो बड़े कर्मकाण्डी और विचार शील भी हैं उनसे जब अकेले मिलो तो बिलकुल सत्य कहते हैं लेकिन मूर्खों के डर से ठीक बातों को साफ़ नहीं कह सक्ते क्योंकि मूर्खों के हाथों से इज़्ज़त बचानी बहुत मुश्किल होजावे।

जवाब—जो लोग मूर्खों से डर कर सच्च बात कहने के वास्ते तय्यार नहीं उनको पण्डित कहना ठीक नहीं क्योंकि वे लोग मूर्खों को परमे-

श्वर से भी बढ़कर मानते हैं क्योंकि परमेश्वर का ख़ौफ़ न करके मूर्खों से ख़ौफ़ करते हैं लेकिन ऐसे लोगों ने ऋषि कुल को कम हिम्मत कर दिया और इन्हीं लोगों के बुरे व्यवहार ने आदमियों को वैदिक धर्म से अलेहदा कर दिया इन्हीं लोगों के मुताबिक़ एक पंजाबी कहावत है कि ईश्वर नज़दीक है या धोखा ऐसे लोगों ने कहा धोखा—ये लोग सच्चे शास्त्रों की असलियत से बिलकुल नावाक़िफ़ हैं सिर्फ़ व्याकरण को रटकर और शास्त्रों के तत्व को उलटा समझकर इन में झगड़े चलता रहे हैं वरना शास्त्रों में ऐसा सीधा रास्ता बतलाया है कि जिससे संसार के सारे झगड़े ख़तम होजावें।

सवाल—तो क्या महाराज ऋषियोंके शास्त्रोंमें कुछ इख़्तलाफ़ नहीं अगर ऐसा मान लिया जावे तो यह शास्त्र मुख़्तलिफ़ नामों से क्यों नामज़द हुए और उस हालत में तो एकही शास्त्र काफ़ी था मुख़्तलिफ़ नामों से बनाने की क्या ज़रूरत थी।

जवाब—क्या शरीर की पांचों ज्ञान इन्द्रियों में कोई इन्द्रिय किसी दूसरी के मुख़ालिफ़ है बिल्कुल नहीं क्या इस हालतमें इन को मुख़्तलिफ़ नामोंसे नामज़द करना ग़लती है यह भी नहीं इसी तरहसे जब ये पांच ज्ञान इन्द्रिय और छटा मन जो कर्म इन्द्रिय और ज्ञान इन्द्रिय दोनों का काम देता है—जिस तरह प्रत्यक्ष पदार्थों के मालूम करने के वास्ते ये छै इन्द्रिय प्रमाण हैं इसी तरह परोक्ष पदार्थोंके बतलाने के वास्ते ये छै दर्शन प्रमाण हैं।

सवाल—तो क्या महाराज के शास्त्रों में कोई किसी के मुख़ालिफ़ नहीं हम ने सुना है कि एक २ शास्त्रकार दूसरे की साफ़ साफ़ तरदीद करते हैं और उन के शास्त्रों में बहुतसे ऐसे सूत्र हैं जिन से साफ़ २ मुख़ालिफ़त टपकती है।

जवाब—बिल्कुल मुख़ालिफ़त नहीं बाज़ मौक़ों पर पूर्व पक्षों के सूत्र जो ऋषियों ने दर्ज किये हैं उन के मतलब को न समझ कर मूर्ख लोग ऋषियों के दर्शनों में मुख़ालिफ़त बतलाते हैं वरनें दर्शनों में एक दूसरे के विरुद्ध कोई मज़मून नहीं है जिस क़दर विरोध है वह नये तर्जुमा करने वालों ने अपनी ग़लत फ़हमी से डाल दिया है। अक़्लमन्द आदमी समझ सक्ता है कि ऋषि कहते हैं वेद मन्त्र के ठीक अर्थ जानने वाले को जब कि सर्व ऋषि वेद मन्त्रों के जानने

वाले हैं तो उन में इख्तलाफ दो तरह से हो सक्ता है कि या तो किसी ने जान बूझ कर वेद के खिलाफ लिखा या वेद में ही इख्तलाफ मौजूद हो। पहली हालत में जो शख्स वेद का मुखालिफ लिखने वाला है उस के वास्ते भी दो हालतें हैं या तो उस ने वेद के मतलब को समझा नहीं या जान बूझ कर किसी गर्ज़ से उसके खिलाफ लिखा पहली हालत में तो वह ऋषि ही नहीं रह सक्ता क्योंकि वेद के अर्थों को जानता नहीं और ऋषि वेद के जाननेवाले का नाम है दूसरी हालतमें भी वह ऋषियोंकी मण्डलीमें नहीं आ सक्ता कि वह वेद के विरुद्ध काम करता है रही यह बात कि वेदों में इख्तलाफ हो सो बिल्कुल ठीक नहीं क्योंकि ज्ञान में इख्तलाफ नहीं होता बल्कि इख्तलाफ अविद्या और अज्ञान में ही होता है और आज तक जितने विद्वान् ऋषि हैं सब इस बात पर मुत्तफिक़ हैं कि वेद में व्याघात दोष नहीं इसी वास्ते ऋषियों की तहरीर एक दूसरे के खिलाफ नहीं होसक्ती।

सवाल—न्याय दर्शन और वैशेषिक सांख्य वगैरह में जो जीव के मुख्तलिफ लक्षण किये गये हैं क्या आप इसे इख्तलाफ नहीं कहेंगे।

जवाब—इस इख्तलाफ को मुखालिफत मानना बिल्कुल गलती है क्योंकि यह तो अवस्था के भेद से उस की मुख्तलिफ हालतों का बयान है जिस वक्त जीव मुक्त होता है उस वक्त उसके और लक्षण होते हैं जब बद्ध होता है तब और लक्षण होता है ऐसी हालत का नाम मुखालिफत नहीं।

सवाल—न्याय दर्शन १६ पदार्थ मानता है वैशेषिक ६ पदार्थ मानता है सांख्य २५ तत्व मानता है क्या इसको भी एक ही कहना और मुखालिफत न मानना बड़ी भारी गलती नहीं है मैं जहां तक समझता हूं यह तो बड़ी सख्त गलती है।

जवाब—न्याय दर्शन के १६ पदार्थ सिर्फ तहक़ीक़ात के मुतअल्लिक़ इल्म हैं जिससे हरएक मुआमिले की तहक़ीक़ात में मदद मिलती है जब तक इनका ज्ञान नहीं तब तक कोई आदमी ठीक २ तहक़ीक़ात का माद्दा नहीं रखता और यह तत्व ज्ञान की पहली मंज़िल है दूसरे वैशेषिक दर्शन में प्रमेयों के मुतअल्लिक़ बहस है और उनके मुवाफ़िक़ व मुखालिफ सिफ़ात का ज़िक्र है; जब तक यह न मालूम

हो कि कौन सी सिफ़त किस चीज़की किससे मिलती है और कौन सी मुख़्तलिफ़ है तब तक मुवाफ़िक़ चीज़ों के हसूल की कोशिश और मुखालिफ़ चीज़ों के त्याग का ख़्याल नहीं हो सक्ता; और जब तक मुवाफ़िक़ का हसूल और मुखालिफ़ का त्याग न हो तब तक दुःख और सुख की निवृत्ति और प्राप्ति नहीं हो सक्ती रहा सांख्य उसमें प्रकृति और पुरुषका विचार है और प्रकृतिकी कुल विकारात्मक ज़िक्र है जिसमें जड़ और चेतन सिद्धान्तों को प्रथक् २ कहा गया है।

सवाल—महाराज अगर सारे ऋषि जो इस सभा में मौजूद हैं अपने शास्त्रों से तत्व ज्ञान के मुतअल्लिक़ हिस्सों को ठीक २ तौर पर समझा दें और उससे हम लोग समझ जावें कि इन मज़ामीन की बाबत ऋषियों में बिल्कुल इत्तफ़ाक़ राय है तो बेशक हम साधनों के पूरा करने में हम पूरे ज़ोर से काम कर सकेंगे।

जवाब—अब तुम लोग आराम करो कल हम सब ऋषियों से प्रार्थना करेंगे कि वे अपने मुख से अपने शास्त्र का सिद्धान्त मुक्ति वग़ैरह ज़रूरी मज़ामीन पर बयान करें जिससे हर शख़्स को इनकी असलियत से वाक़फ़ियत होजावे और जिस किसी को किसी क़िस्म का शक हो वह भी सवाल करके दर्याफ़्त करता जावे जिससे सब के सन्देह मिट जावें और ऋषि मण्डल होने का फल हासिल हो जावे और जो लोग धर्म्म के ठीक २ गौरव को न समझने से धर्म पर पूरा विश्वास नहीं रखते वे लोग भी धर्म कर्म्म में लग जावें—ओ३म् शम्

तीसरा प्रकरण

मुक्ति का स्वरूप

अगले दिन जब ऋषि संध्या अग्नि होत्र व नित्य कर्म्म से फ़ारिग़ हो गये तो तजवीज़ हुई कि आजकल मसले पर बहस हो इस पर महात्मा वशिष्ठ जीने कहा कि सारे प्राणियोंका जो मुख्य उद्देश्य मुक्ति है आज उसके स्वरूपका विचार होना चाहिये क्योंकि जब तक मुक्ति के स्वरूप का ठीक २ ज्ञान नहीं जावे तब तक उस में पूरी प्रीति नहीं हो सक्ती इस वास्ते हर एक महात्मा को चाहिये कि पहले मुक्ति का स्वरूप जानकर उसका हासिल करना अपनी ज़िन्दगी का उद्देश समझें इस वास्ते अब हर एक ऋषि को मुक्ति का स्वरूप

बतलाना चाहिये और मेरे ख़याल में सब से पहले महात्मा गौतम जी महाराज को जो न्याय दर्शन के कर्त्ता और दर्शन शास्त्रों के पहले आचार्य हैं उन का कहना चाहिये फिर दर्शनों की बनावट के सिलसिले के साथ जो हम पर बहस हो। वशिष्ट जी की इस बात को सुन कर महात्मा गौतम मुनि ने कहा कि मेरे ख़याल में जो मुक्ति का स्वरूप है उस को बयान करता हूं सुन कर जिस किसी को शक हो वह सवाल करे कि उस को दूर कर सकूं।

गौतमजी—मैं ने अपने ग्रन्थ में मुक्ति के वास्ते अपवर्ग शब्द का इस्तेमाल किया है जिसकी तारीफ़ मैंने यह की है देखो सूत्र नम्बर २२ अध्याय प्रथम

तदत्यंत विमोक्षोऽपवर्गः ।

यानी दुःख का बिलकुल छूट जाना मुक्ति है—अब बहुत से लोग ऐसा कहते हैं कि दुःख का अत्यन्त अभाव मुक्ति है और मेरे सूत्र का भी यही मतलब बतलाते हैं यह ठीक नहीं क्योंकि अत्यन्त अभाव जिस चीज़ का होता है उसका अस्तित्व संसार में कहीं नहीं होता लेकिन एक जीव के मुक्त होजाने से दुःख संसार में मौजूद रहता है बल्कि सब जीवों के मुक्त होने पर भी दुःख का अभाव नहीं होसक्ता, क्योंकि वह जीव का धर्म नहीं वह जिसका धर्म है उसमें स्थिर रहेगा क्योंकि कोई धर्मी धर्म के बिना क़ायम नहीं रह सक्ता।

सवाल—जिस दुःख से छूटने का नाम आप मुक्ति बतलाते हैं उसका लक्षण क्या है ? और आप के मत में मुक्ति के क़िस्म की हैं। हम लोग तो चार प्रकार की मुक्ति मानते हैं सायुज्य यानी परमात्मा में शामिल होजाना, सारूप्य यानी परमात्मा जैसा रूप हो जाना, सालोक्य यानी परमात्मा के लोक में रहना, सामीप यानी परमात्मा के नज़दीक रहना—इनमें से आपकी मुक्ति किसीमें नहीं मिलती।

जवाब गौतमजी—"बाधना लक्षणं दुःखं" क़ैद अर्थात् आज़ादी का न होना और यह जड़ चीज़ों का धर्म है और जड़ के संग से चेतन को भी मालूम होता है और जड़ चीज़ें तो हमेशा आज़ादी से अलैहदा रहती हैं और परमात्मा सर्व व्यापक होनेसे क़ैद हो नहीं सक्ता सिर्फ़ जीवात्मा जो एक देशी और थोड़े ज्ञान वाला है वह हमेशा आज़ाद और क़ैद होता है पस जब वह क़ैद होता है तब उसे दुःख और बन्धन कहते हैं और जब वह दुःख से आज़ाद हो जाता है उसे मुक्ति कहते हैं और तुम्हारी चार क़िस्म की मुक्ति

तो हर वक़्त जीव को हासिल है कोई भी पापी से पापी जीव इस से ख़ाली नहीं क्योंकि परमात्मा सब जीवों के भीतर बाहर मौजूद है इसी वास्ते हर एक जीव उस से मिला हुआ है और परमात्मा भी निराकार और चेतन है परमात्मा का लोक जो ब्रह्माण्ड है सब जीव उस में रहते हैं उससे बाहर कहीं जाते नहीं सके और परमात्मा से कोई जीव भी दूर नहीं इस वास्ते सामीप्य मुक्ति भी सबको हासिल है जो चीज़ हासिल है उसको हासिल करने की कोशिश करना फ़िज़ूल है बल्कि हरएक शख़्स को जो दुःख में फंसा हुआ है दुःख से छूटने की कोशिश करनी चाहिये और यही मनुष्य का फ़र्ज़ आला है।

सवाल—क्या कभी जड़ चीज़ भी दुःख का अधिकरण हो सक्ती है अगर ऐसा होता तो मकान वग़ैरह जड़ पदार्थ भी अपने दुःख को प्रकाश करते लेकिन ऐसा कहीं भी नहीं पाया जाता और आपने भी तो जीव का लक्षण दुःख को क़रार दिया है जैसा कि आपने अपने न्याय शास्त्र में लिखा है:—

सुखदुःखइच्छाद्वेषप्रयत्नज्ञानानि आत्मनोलिङ्गम् ॥

जवाब गौतमजी—अगर्चे दुःख यानी आज़ादी का न होना जड़ का ही धर्म है लेकिन उसका ज्ञान चेतन को ही होसक्ता जैसे आग गर्म है यह गर्मी जिस को मालूम होती है चेतन को और पानी ठंडा है ठंडक का ज्ञान जिस को होता है चेतन को ऐसे ही दुःख रूप जगत से दुःख का ज्ञान चेतन को ही होता है और जो तुम ने हमारे सूत्र का प्रमाण दिया सो उस में हमारा यह मतलब नहीं जो तुम समझ रहे हो। लक्षण दो क़िस्म के होते हैं एक स्वरूप लक्षण दूसरे तटस्थ लक्षण स्वरूप लक्षण उसे कहते हैं जो लक्ष्य के साथ हमेशा रहता है जैसे आग में गर्मी और दूसरा तटस्थ लक्षण वह है जैसे किसी ने पूछा कि भगवान का मकान कौनसा है दूसरे ने बतलाया वह जिस पर मोर बैठा हुआ है और जिस के आगे भैंस बंधी हुई है अब यह मोर का बैठना और भैंस का बंधा होना मकान के स्वरूप से बिल्कुल अलैहदा है और यह बदलने वाला है आपको इतना तो विचारना चाहिये था कि अगर जीव का स्वरूप लक्षण दुःख को मान लिया जावे तो दुःख किसी तरह पर भी दूर हो नहीं सक्ता और दुःख के नाशसे जीव का नाश होगा ऐसे ही सुख भी जीवका स्वाभाविक धर्म

नहीं वह भी संयोग से पैदा होता है इसी तरह इच्छा और द्वेष भी जीव की ज़ाती सिफ़त नहीं बल्कि शरीर के ताल्लुक से पैदा होती हैं जीव का स्वरूप लक्षण तो ज्ञान और प्रयत्न है।

सवाल—यह इसवक्त आपने कहा है लेकिन आपकी पुस्तक में ऐसा कहीं नहीं लिखा है और न किसी भाष्य करने वाले ने ऐसा बतलाया है इससे सब लोग इन छै ही गुणों को स्वरूप लक्षण समझते हैं और बहुत से इसपर ऐतराज़ भी करते हैं अगर आप किसी सूत्र में इस को साफ कर देते तो लोगों को बहुत शक़ूक न पैदा होते।

जवाब गौतमजी—लोगों को शक़ूक तो उनकी अल्पज्ञता से पैदा होते हैं वरने हमने तो दूसरे ही सूत्र में इसको साफ कर दिया है देखो सूत्र यह है:—

दुःखजन्मप्रवृत्तिदोषमिथ्याज्ञानानां मुत्तरोत्तरापायात्तदन्तरापायादपवर्गः॥

अर्थ—दुःख जन्म प्रवृत्ति दोष और मिथ्या ज्ञान के इस तरह पर नाश होने से कि तत्व ज्ञान से मिथ्या ज्ञान का नाश हो और मिथ्या ज्ञान के नाश से उससे पैदा होने वाले राग द्वेष का नाश होजावेगा और रागद्वेष के नाशसे प्रवृत्ति यानी शग़ल न पैदा होगा और प्रवृत्ति के न पैदा होने से कर्म और जन्म मरण नहीं पैदा होंगे और जन्म मरण के न होने से दुःख नहीं पैदा होगा।

सवाल—महाराज इसमें तो सिलसिला है इस में यह कहां लिखा है कि दुःख सुख और इच्छा द्वेष यह जीव का स्वरूप लक्षण नहीं यह न तो सूत्र से प्रगट होते हैं और न भाष्यकार ने लिखा है।

जवाब गौतम जी—भाई जब यह बतला दिया कि यह चारों मिथ्या ज्ञान से पैदा हुये हैं और जीव के नित्य होनेसे उसके सारे धर्म हमेशा रहने वाले हैं और जो चीज़ें पैदा होती हैं वह हमेशा रह नहीं सकीं अब यह धर्म भी जीव के साथ हमेशा नहीं रहेंगे और जो जीव के साथ हमेशा न रहे वह स्वरूप लक्षण कहला नहीं सका—इस से साफ़ ज़ाहर है कि यह चारों जीव का स्वरूप लक्षण नहीं।

सवाल—महाराज इस सूत्र में सिर्फ दुःख का नाम तो आया है लेकिन इच्छा द्वेष और सुख का तो नाम भी कहीं नहीं आया इससे दुःख को छोड़कर बाक़ी पांच जीव के स्वरूप लक्षण मानने चाहिये।

जवाब महात्मा गौतमजी—इच्छा द्वेष दोनों दोष के कहने से आ गये और सुख की इच्छा और दुःखसे द्वेष होता है इसवास्ते इच्छाके कहनेसे सुख का भी बोध होजाता है सूत्रों में ज़ियादः तशरीह नहीं की जाती।

सवाल—द्वेष शब्द से इच्छा और द्वेषका किस तरह ग्रहण होसक्ता है क्योंकि सूत्र में इसके वास्ते कोई लफ़्ज़ नहीं।

जवाब गौतमजी—इच्छा से और द्वेष से संसार के लोग प्रवृत्ति करते हैं यानी जिस कामको सुखका सबब समझते हैं उसकी इच्छा करके उसको करना शुरू करते हैं और जिस चीज़ या फ़ेल को दुःखका सबब समझते हैं उससे द्वेष होजाता है उसके नाश करने के वास्ते कोशिश करते हैं इसवास्ते हरएक काम इच्छा या द्वेषके सबब से शुरू किया जाता है और जो प्रवृत्ति का सबब है वह ही दोष है जैसा कि सूत्र में लिखा है:—

प्रवर्त्तनालक्षणादोषाः॥

अर्थ—जो प्रवृत्ति का सबब हो उसे दोष कहते हैं और इन दोनों के सिवाय प्रवृत्ति का कोई सबब नहीं इस वास्ते दोष लफ़्ज़ से इच्छा और द्वेष का ग्रहण करना चाहिये।

सवाल—तो क्या मुक्ति में दुःखका बिल्कुल नाश नहीं होता अगर दुःख जीव का स्वाभाविक धर्म न माना जावे किन्तु मिथ्या ज्ञानसे माना जावे तो मिथ्या ज्ञानके नाश से दुःख का नाश होजावेगा अब वह दुःखका अत्यन्ताभाव होगा।

जवाब गौतमजी—दुःख के मालूम करने का सबब मिथ्या ज्ञान है और मिथ्या ज्ञान भी जीव का स्वाभाविक धर्म नहीं इस कारण नाश होने से उसके कार्य का नाश होजावेगा लेकिन वह अत्यन्ताभाव नहीं बल्कि ध्वंसाभाव कहलाऐगा और अत्यन्ताभाव तो तब कहलाता है जब दुःख कभी होता ही नहीं जिस चीज़ का तीन काल में अभाव हो उसे अत्यन्ताभाव कहते हैं लेकिन दुःख का तीन काल में तो अभाव तुम मानते नहीं इसवास्ते सिद्धान्त यह है कि जैसे अग्नि के मिलाप से जिस वक़्त हवा में गर्मी आजाती है उस वक़्त जल का गुण शीत उसमें बिल्कुल नहीं रहता और इसका मतलब यह न समझ लेना कि एक जगह की हवा में गर्मी होनेसे सारे संसार की हवा में से सर्दी का नाश होगया यदि यह मान भी लिया जाय कि

कि सारे संसार की हवा में से भी सर्दी का नाश होजावे तो जलमें जो सर्दी असली है वह सर्दी ज़रूर होगी इसी तरह जिस जीव को तत्व ज्ञान होगा और वह जब तक रहेगा उस वक़ तक उस जीवको दुःख से बिल्कुल अलैहदगी होगी और दुःख उसे नहीं सतावेगा।

सवाल—क्या तत्व ज्ञान होकर भी नाश होजाता है।

जवाब गोतमजी-जो चीज़ पैदा होती है उसके नाश होनेमें क्या सन्देह है क्योंकि जो कुछ पैदा होता है वह अनित्य है और जिसके वास्ते साधनों की ज़रूरत है वह अनित्य है इसवास्ते तत्व ज्ञान जीवका स्वाभाविक धर्म तो है नहीं सिर्फ साधनों से पैदा होता है इसी वास्ते उसको नित्य मानने में कोई युक्ति और प्रमाण नहीं।

सवाल—तत्व ज्ञान के साधन क्या हैं जिससे उसकी उत्पत्ति मानी जावे-लोग तो कहते हैं कि तत्व ज्ञान आ स्वाभाविक धर्म है-उसको मिथ्या ज्ञान ने ढांप लिया है।

जवाब गोतमजी-तत्व ज्ञानके साधन प्रमाण हैं प्रमाणोंकी शक्तिसे हरएक वस्तुका ठीक २ गुण कर्म स्वभाव मालूम होजाता है बस यही तत्वज्ञान है।

सवाल—प्रमाण कितने हैं और हर एकसे किस २ पदार्थ का ज्ञान होता है?

जवाब गोतमजी—प्रमाण चार हैं—प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान और शब्द-जो चीज़ें नज़दीक और अपरोक्ष होतीहैं उनका ज्ञान ज़ाहिरी इन्द्रियों से होता है सो यह इन्द्रिय ही प्रत्यक्ष प्रमाण कहलाती है और जो पदार्थ प्रत्यक्ष के लायक़ तो है लेकिन बसबब दूरी के उनके धर्मों का पूरा ज्ञान होता नहीं-मगर किसी ख़ास सिफ़त का जो उसके बग़ैर दूसरे में न हो प्रत्यक्ष होता है और पहले इस सिफ़त का मौसूफ़ के साथ ताल्लुक़ साबित हो चुका है तो ऐसी हालत में उस एक सिफ़त से ही मौसूफ़ की हस्ती के ज्ञान का नाम अनुमान प्रमाण है इसका आधार मन है जब एक चीज़ की उपमा से दूसरी चीज़ को मालूम किया जाता है तो उसे उपमान कहते हैं ये तीनों प्रमाण तो अपरोक्ष चीज़ों के वास्ते हैं और जो चीज़ें परोक्ष हैं उन के ज्ञान के वास्ते शब्द प्रमाण है और उसका आधार बुद्धि है।

सवाल—शब्द प्रमाण से आप क्या मुराद लेते हैं हरएक शब्द प्रमाण हो सकता है और उससे परोक्ष पदार्थका ज्ञान ठीक तौरपर होसकता है या नहीं।

जवाब—हरएक आदमी का कहना परोक्ष ज्ञान के वास्ते प्रमाण नहीं हो

सकता और इसने शब्द प्रमाण के लक्षण में बतला दिया है कि शब्द दो क़िस्म का होता है एक वह जिसका अर्थ ज़ाहिर है एक वह जिसका अर्थ पोशीदह है।

आप्तोपदेशःशब्दः

अर्थ—जो आप्त का उपदेश हो उसे शब्द प्रमाण कहते हैं आप्त के मानी हैं जिस ने धर्म यानी सिफ़त के इस्तेमाल से मौसूफ़ का ठीक २ इल्म हासिल कर लिया हो और वह अपने उस इल्म को दूसरों के भले के वास्ते उपदेश करे और सब आप्त सर्व व्यापक परमात्मा है उसका जो उपदेश है वही शब्द प्रमाण है और उस के अनुकूल होने से और लोगों का कहना भी शब्द प्रमाण में लिया जाता है लेकिन जो उस परमात्मा के उपदेश के ख़िलाफ़ हो वह किसी हालत में क़ाबिल तसलीम नहीं-जब महात्मा गोतमजी ने मुक्ति दुःखः के दूर होने का नाम बतलाया और उस का हेतु यानी सबब प्रमाण आदि सोलह पदार्थों का ठीक २ ज्ञान बतला दिया तब महात्मा वशिष्ठ जी ने कहा कि गोतमजी का सिद्धान्त मुक्ति के मज़मून पर मालूम हो गया यह दुःख से छूटने का नाम मुक्ति मानते हैं और जैसा कि लोग यह ख़याल करते हैं कि गोतम जी दुःख के बिल्कुल अभाव को मुक्ति मानते हैं ऐसा नहीं बल्कि मुक्ति काल में मुक्त जीव को बिल्कुल दुःख का अभाव मुक्ति मानते हैं और यह जो लोग ख़याल करते हैं कि दुःख को जीव का स्वाभाविक गुण या लक्षण महात्मा गोतमजी मानते हैं यह भी ठीक नहीं बल्कि महात्मा गोतम दुःख को मिथ्या ज्ञान के सबब से पैदा शुदह मानते और दुःख वग़ैरः के होन को शरीर में रहने वाली आत्मा का लक्षण बतलाते हैं और ज्ञान और प्रयत्न जीवात्मा का लक्षण बतलाते हैं अब सब को समझ लेना चाहिये कि मुक्ति के स्वरूप और जीव के स्वरूप और लक्षण में गोतमजी का बिल्कुल फ़र्क़ नहीं और जो लोग न्याय को इस मज़मून में और शास्त्रों के मुख़ालिफ़ समझते हैं वे बिल्कुल ग़लती पर हैं और इसी क़िस्म की ग़लती कर अन्यायियों ने ऋषियों के शास्त्रों को बदनाम कर दिया है और लोगों की श्रद्धा उनमें से हटादी है अब मेरे ख़याल में महात्मा कणाद जी को इस मज़मून पर अपना सिद्धान्त ज़ाहिर करना चाहिये।

कणादजी मुक्ति के स्वरूप में मुझसे भी महात्मा गोतमजी से इत्तफ़ाक़ है बल्कि वैशेषिक शास्त्र में भी उसका नाम निःश्रेयस लिखा है और उस का मफ़हूम भी वैसा ही है क्योंकि उसका मतलब दुःख का बिल्कुल अभाव ही है लेकिन सवाल यह पैदा होता है कि मौजूदह दुःख के दूर होने को मुक्ति कहोगे या गुज़रे हुये दुःख के दूर होने का नाम मुक्ति है या आनेवाले दुःखों के न होनेको मुक्ति मानना पड़ेगा या तीन काल में दुःख के न होने को मुक्ति कहा जावेगा-इसका उत्तर यह है कि गुज़रे हुये दुःख का दूर होना मुक्ति नहीं क्योंकि वह तो खुद का दूर होगया है वर्त्तमान दुःखका दूर होनाभी मुक्ति नहीं क्योंकि वह भी अगले क्षणमें भूत होकर खुद बखुद दूर होजाता है सिर्फ़ आनेवाले दुःखका दूर होना मुक्ति है जो लोग दुःख का अत्यन्ताभाव मुक्ति मानते हैं वे तो बिल्कुल ठीक नहीं क्योंकि तीन कालमें दुःख का न होना तो जड़को होसक्ता है क्योंकि उसको ज्ञानही नहीं या सर्वज्ञ परमात्मा को होसक्ता है क्योंकि उसको मिथ्या ज्ञानही नहीं सक्ता और दुःख मिथ्या ज्ञानकी सन्तान है और इस बात में भी इनसे इत्तफ़ाक़ है कि मुक्ति तत्वज्ञान से होती है क्योंकि सिवाये तत्व ज्ञानके और कोईचीज़ मिथ्या ज्ञान को नाश नहीं कर सक्ती और जब तक मिथ्या ज्ञान नाश नहीं होगा तब तक मुक्ति नहीं हो सकती और उसने अपने सूत्र में धर्म्म का लक्षण करते हुए साफ़ तौर पर लिखा है देखो सूत्र:—

यतोऽभ्युदयनिःश्रेयससिद्धिःसधर्म्मः ।

अर्थ-जिससे तत्वज्ञानके सबब जीवको मुक्ति हासिलहो या जो तत्व ज्ञान के ज़रिये से मुक्ति का सबब हो उसे धर्म्म कहते हैं-बाज़ लोग यह अर्थ करते हैं कि जिससे संसार के सुख और मुक्ति हासिल हो उसे धर्म्म कहते हैं लेकिन यह ठीक नहीं क्योंकि मुक्ति और संसार के सुख एक-दूसरे के विरोधी है संसार के सुख इन्द्रियों की ख़्वाहिश पूरा करने और प्रकृति की उपासना से होता है और इन्द्रियोंके विषय और प्रकृति की उपासना मुक्तिके वास्ते हानि करनेवाले हैं इसवास्ते तत्वज्ञान ही लेना चाहिये अब सवाल होता है कि तत्वज्ञान से क्या फायदा है अगर सीधा यह कहा जावे कि जिसके करने से मुक्ति हो उसे धर्म्म कहते हैं तो उसका जवाब यह है कि

पहले धर्म्म करना होगा और बाद में मुक्ति होगी ऐसी हालत में अधर्म्म भी धर्म्म कहला सकता है और इसी ख़याल से हज़ारों क़िस्म के मत फैला दिये और हरएक मतवाला अपने मतको मुक्तिका साधन समझता है, यहां तक भी हुआ कि ऐसे मतोंमें मुक्तिका स्वरूप भी बिगड़ जाता है इसवास्ते वैशेषिक नियम के मुताबिक पहले देखना फिर चलना धर्म्म है और पहले चलना और बाद में देखना अधर्म्म है इस वास्ते जहां तत्व ज्ञान के बग़ैर कर्म्म बतलाया जावे वह कभी मुक्ति का साधन नहीं हो सकता।

सवाल—क्यों जी तत्वज्ञान किसका होना चाहिये जिसके मुताबिक कर्म करने से मुक्ति हो अगर कहो हर चीज़ का तो अल्पज्ञ जीवात्माके वास्ते कभी मुमकिन नहीं अगर कोई ख़ास चीज़ है तो उसका नाम बतलाना चाहिये।

जवाब—चूंकि संसार में देखा जाता है कि हर एक चीज़ जिस की सिफ़ात अपने मुवाफ़िक हों उस से राहत अर्थात् सुख होता है और जिस की सिफ़तें मुख़ालिफ़ हों उससे नुक़सान पहुंचता है इस वास्ते सुख दुःख के साधन यानी मुख़ालिफ़ व मुवाफ़िक ज्ञान होना चाहिये और बाक़ी बहुतसी ऐसी चीज़ें हैं कि जिन का ज्ञान न भी हो तो कोई हर्ज नहीं।

सवाल—सुख दुःख के साधन जो तुम मुख़ालिफ़ और मुवाफ़िक सिफ़ात को बतलाते हो तो वह सिफ़ात किसी मौसूफ़ में रहती है या बज़ात खुद कोई चीज़ है।

जवाब—द्रव्य—गुण-कर्म-सामान्य-विशेष और समवाय यह छः पदार्थ हैं द्रव्य में गुण रहते हैं और गुणों के समूह का नाम द्रव्य है जिन में सामान्य गुण हों उन में इत्तफ़ाक़ होता है और विशेष गुण एक को दूसरे से अलहदा करता है इसी तरह पर सब पदार्थों के धर्म्म को जानकर जो कर्म होता है उस से सुख होता है जहां बग़ैर जाने कर्म होता है वहां दुःख होता है।

सवाल—जो दुःखकी निवृत्ति मुक्ति मानते हो यह ठीक नहीं बल्कि नित्य सुख की प्राप्ति को मुक्ति कहना चाहिये-जब तक सुख हासिल न हो तब तक मनुष्य की आत्मा को शान्ति किसी तरह नहीं हो सक्ती।

जवाब—जो चीज़ हासिल होती है या जिस का संयोग होता है वह कभी

नित्य नहीं हो सकती क्योंकि जो सुख हासिल होगा वह किसी वक़्त में ज़रूर हासिल होगा और इस से पहले बिल्कुल नहीं होगा अगर कहो पहले नहीं था तो नित्य सुख कैसे हुआ क्योंकि नित्य के मानी तीन काल में रहने वाले के हैं और जिसका आदि हो उसका अन्त ज़रूरी है इस वास्ते यह नतीजा निकला गया है कि जो चीज़ें पैदा होती हैं वह अनित्य हैं और जो चीज़ पैदा नहीं होती वही नित्य हैं अब तुम्हारे जिस सुख का संयोग हुआ है वह संयोग नित्य किसी तरह हो सकता है।

सवाल—अगरचे मुक्ति से पूर्व सुख मौजूद था लेकिन उस को बेहनी दुख ने ढांप लिया था अब वह आवरण नष्ट होगया तो प्राप्त सुख मालूम होने लगा अगर नया सुख कहीं से मिलता तो उसका संयोग पाया जाता—जिस के वास्ते नाश की ज़रूरत भी होती जैसे कपड़े की सफ़ेदी को रंग ने ढांप लिया जब रंग दूर हो गया सफ़ेदी निकल आई—चूंकि सफ़ेदी कपड़े की स्वाभाविक गुण है इस वास्ते वह अनित्य नहीं हो सकती इसी तरह सुखको समझना चाहिये।

जवाब—यह मिसाल और कहना बिल्कुल ठीक नहीं क्योंकि अव्वल तो जीव स्वाभाविक मुक्त है यह समझना ही क़ाबिल वहम है क्योंकि स्वाभाविक मुक्ति होने से ब्रह्म और जीव के लक्षणों में कुछ फ़र्क नहीं रहता बिल फ़र्ज़ मुहाल अगर मान भी लिया जावे तो भी ग़लती है क्योंकि कपड़े की सफ़ेदी दूसरे इन्सानों की नज़र से छिप गई थी तो मुमकिन है यहां जीव का गुण जीव से कैसे छिप सकता है ढांपना हमेशा दूसरे से मुमकिन है लेकिन गुण और गुणी में ढांपना नहीं हो सकता—अगर दोनों को नैमित्तिक मानो तो नित्य सुख नहीं रह सकता इस वास्ते नित्य सुख की प्राप्ति मुक्ति है यह ख़याल ठीक नहीं।

सवाल—अगर मुक्ति में सुख की प्राप्ति न मानकर दुःखकी निवृत्ति ही मानो जबकि तो ऐसी मुक्ति से और जड़ पदार्थों से क्या फ़र्क़ है क्योंकि जड़ पदार्थ भी दुःख से अलहदा है उसे कुछ भी दुःख नहीं मालूम होता दूसरे सुषुप्ति अवस्था में भी दुःख नहीं होता तो सुषुप्ति और मुक्ति का क्या फ़र्क होगा ऐसे ही ग़फ़लत और बेहोशी में भी मुक्ति समझनी चाहिये क्योंकि उसवक़्त भी दुःख का ज्ञान नहीं होता।

जवाब—यह ख़याल ठीक नहीं क्योंकि क़ैदसे आज़ादी हर शख़्स चाहता है

आज़ादी में सिवाय आज़ादी के और क्या नफ़ा है और जो तुम जड़ पदार्थों को मुक्त के मुक़ाबिल लाते हो वह किस तरह हो सकता है हर एक जड़पदार्थ अपने अस्तित्व के ज्ञान से शून्य और [illegible] लोगों को मुक्ति में है और हमने जो मुक्ति में सुख की तरदीद की है वह नित्य सुख की तरदीद है और नैमित्तिक आनन्द तो उसवक़्त होता है लेकिन सुख की प्राप्ति से पहले दुःख की निवृत्ति लाज़िमी है जब तक दुःख दूर न होजाय तब तक सुख का ज्ञान कैसे हो सकता है क्योंकि मन का स्वभाव है कि वह एक काल में दो चीज़ों का ज्ञान नहीं हासिल कर सकता इस वास्ते जब दुःख का ज्ञान होगा तब सुख का नहीं होगा इसलिये दुःख का दूर होना ही मुक्ति है और मुक्ति शब्द का अर्थ भी छूटना है न कि किसी चीज़का हासिल करना जब महात्मा कणाद जी ने भी मुक्ति के स्वरूप में महामुनि गौतम का साथ दिया और सवाल व जवाब से उनकी सिद्धांत पक्ष भी मालूम हुआ और उनकी तक़रीर से साफ़ ज़ाहिर होगया कि महात्मा कणाद और गौतम जी मुक्ति के स्वरूप में एक राय रखते हैं तब महात्मा वशिष्ठ जी ने कहा कि अब महात्मा कपिल जी को मुक्ति के स्वरूप में अपना सिद्धान्तबयान करना चाहिये चूंकि संध्या का वक़्त होगया था इस वास्ते सभा बरख़ास्त हो गई और अगले रोज़ सुबह ही स्नान संध्या और अग्नि होत्र से फ़ारिग़ हो कर सब ऋषि लोग धर्म चर्चा और मुक्ति के स्वरूप की तहक़ीक़ करने के वास्ते सभा में आ मौजूद हुए तब वशिष्ठ ऋषि जी ने लोगों से कहा कि महात्मा कपिल जी का उपदेश है आप लोग गौर से सुनें क्योंकि उनकी निस्बत मूर्खों ने बहुत से शकूक आम के दिलों में डाल दिये हैं इसके बाद सब लोग महात्मा कपिल जी का व्याख्यान मुक्ति के स्वरूप पर सुनने के वास्ते एक चित्त और शान्त होकर बैठ गये।

कपिल जी का व्याख्यान।

महात्मा कपिल जी बोले कि मैंने अपने शास्त्र के शुरू में ही लिख दिया है कि तीन क़िस्म के दुःखों की निवृत्ति ही मनुष्य जीवन का उद्देश्य और मुक्ति है मेरे शास्त्र का पहला सूत्र यह है:—

अथ त्रिविधदुःखात्यन्त निवृत्तिरत्यन्तपुरुषार्थः ।

अर्थ—(आध्यात्मिक) (आधिभौतिक) (आधिदैविक) इन तीन क़िस्म के दुःखों का दूर करना मनुष्य जीवन का अंतिम मक़सद है और दुःखों का दूर होना ही मुक्ति है।

सवाल—आध्यात्मिक दुःख किसे कहते हैं ?

जवाब—जो दुःख अन्दर ही पैदा होकर तकलीफ़ दे जिसका सबब कोई बैरूनी चीज़ नहीं जैसे ईर्षा, द्वेष आदि।

सवाल—आधिभौतिक दुःख किसे कहते हैं ?

जवाब—जो किसी जीव के सम्बन्ध से पैदा हो जैसे किसी को सांप ने काटा या किसीको शेर ने मार दिया या किसीको किसी आदमी ने हथियार से तकलीफ़ दी

सवाल—आधिदैविक किसे कहते हैं।

जवाब—जो दुःख किसी दैवी शक्ति से पैदा हो जैसे बिजली के गिरने से या बारिश की कमी ज़ियादती वग़ैरह से जो तकलीफ़ होती है।

सवाल—दुःख का छूटना अगर मुक्ति मानें तो किस किस्म का दुःख छूटना चाहिये क्योंकि काल के लिहाज़ से दुःख तीन क़िस्म का है अव्वल गुज़िश्ता दूसरे मौजूदह तीसरे आइन्दह अगर कहो गुज़िश्ता दुःख को दूर करना मुक्ति है तो हर शख़्स मुक्त होगया क्योंकि सब के सब दुःख दूर होगये-अगर कहो मौजूदह दुःखका दूर करना मुक्ति है तो भी नहीं होसकता तब तक वह गुज़िश्ता होकर गुज़र जायगा-अगर कहो कि आनेवाले दुःख का दूर करना मुक्ति है तो भी ठीक नहीं क्योंकि जो बीमारी अभी पैदा नहीं हुई उसका इलाज क्या हो सकता है जो बीमारी इसको दस वर्ष बाद होगी आज हम उसकी निस्बत क्या इन्तज़ाम कर सकते हैं।

जवाब—आनेवाले दुःख का दूर करना मुक्ति है क्योंकि गुज़िश्तह और मौजूदह के बाबत तो इन्सान व पशु दोनों बराबर हैं सिर्फ़ आइन्दह के इन्तज़ाम के वास्ते इन्सान को अक़्ल दी गई है-इसवास्ते इन्सान को बतलाया गया है कि वह दुःख के कारण को जानकर उसके नाशकी कोशिश करे जब कारण मौजूद न होगा तो कार्य्य पैदा नहीं होगा जैसा कि लिखा है:—

कारणाभावात्कार्य्याभावः

यानी कारण के न होनेसे किसी हालत में भी कार्य्य नहीं हो सकता इसवास्ते देखना चाहिये कि दुःख का कारण क्या है जब मालूम होजावे तब उसको त्याग कर दुःख से बच सकते हैं जैसे गर्म चीज़ोंके खानेसे और धूपमें फिरनेसे या बहुत आदमियों की भीड़ में रहने से गर्मी की बीमारी पैदा होती है अगर आदमी ऐसा न करे तो कभी वह बीमारी पैदा न होगी।

सवाल—क्या दुःख का भी कोई कारण है ? क्योंकि वह तो जीव का स्वाभाविक गुण सुना जाता है जब दुःख स्वाभाविक गुण है तो उसका नाश किस तरह पर हो सकता है ?

जवाब—अगर दुःख जीवका स्वाभाविक गुण होता तो वह किसी तरह पर भी नाश नहीं हो सकता और उसके नाश से जीव का भी नाश हो जायगा क्योंकि गुण और गुणीका नित्य सम्बन्ध रहता है और चूंकि वेद ने भी मुक्ति के साधनोंका उपदेश किया है इससे मालूम होता है कि दुःख स्वाभाविक गुण नहीं किसी कारण से पैदा होता है:—

न स्वभावतो बद्धस्य मोक्षसाधनोपदेशविधिः ।

अर्थ—वेद में स्वाभाविक दुःख के दूर करने का तरीक़ा नहीं होसकता क्योंकि वेद का उपदेश ग़लत बातों के बाबत कभी नहीं होसकता-

सवाल—अगर्चे वेद में मुक्ति का उपाय लिखा है लेकिन हम लोग किसी त शरीर को बग़ैर मुक्ति के नहीं त्याग सकते और हमें दुःख जीव का स्वाभाविक गुण मालूम होता है।

जवाब—जो गुण किसी वक़्त में रहे और किसी वक़्त में न रहे वह उसका स्वाभाविक गुण नहीं हो सकता चूंकि अकसर लोगों पर दुःख नहीं रहता इस वास्ते दुःख को जीव का स्वाभाविक गुण नहीं कह सके और जो दुःख को स्वाभाविक मानते हैं उनको बीमारी का इलाज और भूख के वास्ते ग़िज़ा न खानी चाहिये।

सवाल—दुःख जीव का स्वाभाविक गुण है और वह हरवक़्त जीव को होता है लेकिन कभी २ सुख उसे ढांप लेता है इसवास्ते उसवक़्त उसे मालूम नहीं होता दुःख ऐसी चीज़ नहीं जो कभी न हो।

जवाब—स्वाभाविक गुण का आवरण नहीं हो सकता क्योंकि आवरण दूसरे की नज़र में होता है कभी ऐसा नहीं होता कि आग की गर्मी

आग में मलोल न हो बल्कि दर्मियान में परदह आजाने से दूसरों को मालूम नहीं होती और तुम जो कहते हो कि दुःख को सुख दबा लेता है तो क्या सुख जीव का स्वाभाविक गुण नहीं।

सवाल—हम सुख दुःख दोनों जीव के स्वाभाविक गुण मानते हैं जब सुख की सामग्री होती है तब सुख दुःख को दबा लेता है और जब दुःख की सामग्री होती है तब दुःख सुख को दबा लेता है।

जवाब—सुख दुःख दोनों विरुद्ध गुण हैं ये दोनों गुण एकही गुणीमें एक काल में कभी नहीं रह सकते चूंकि स्वाभाविक गुण होनेसे दोनोंका अपने गुणी जीवमें हर वक्त रहना लाज़िमी है और इसवास्ते संसारमें एक भी दृष्टांत नहीं जहां गुणीमें एक कालमें दो विरुद्ध गुण रहते हों।

सवाल—संसार में हम विरुद्ध गुण का एक गुणी में होना देखते हैं क्योंकि एक आदमी जो बोलने की ताकत रखता है और वही खामोश भी रहता है खामोशी और बोलना दोनों विरुद्ध गुण हैं—

जवाब—यह दलील ठीक नहीं क्योंकि जिस वक्त बोलता है उस वक्त खामोशी नहीं और जिस वक्त खामोशी है उस वक्त बोलता नहीं दूसरे बोलना चलना वगैरह गुण नहीं बल्कि कार्य है कार्य का करना या न करना कर्ता के इख़्तियार में है।

सवाल—इस के वास्ते और भी बहुतसी मिसालें हैं मसलन एक लकड़ी में आग और पानी के इज्ज़ा एक काल में दोनों रह सकते हैं और आग और पानी दोनों विरुद्ध सिफत वाले मौसूफ हैं इस से साफ पाया जाता है कि एक ही मौसूफ लकड़ी में दोनों किस्म के विरुद्ध इज्ज़ा मौजूद हैं।

जवाब—यह मिसाल इस से भी ज़ियादह ग़लत है क्योंकि इज्ज़ा हर कार्य के मुख़्तलिफ चीज़ें होती हैं मुख़्तलिफ चीज़ों में मुख़्तलिफ गुण रह सकते हैं लेकिन एक मौसूफ में एक कालमें दो विरुद्ध सिफातका होना नामुमकिन है आग अलेहदह चीज़ है पानी अलेहदह चीज़ है इसवास्ते ये दोनों एक लकड़ी में मौजूद हैं लेकिन ग़ौर से सोचने से मालूम होता है कि ये दोनों न तो एक मौसूफ की विरुद्ध सिफतें और नहीं एक जगह पर रहती हैं क्योंकि जिस जगह पर पानी है वहां आग नहीं और जहां आग है वहां पानी नहीं।

सवाल—चूंकि मौसूफ मजमूआ सिफात होता है और कुल मजमूआ इज्ज़ा

होता है इस वास्ते सिफात और कुल में कोई फर्क नहीं इस जब मुतज़ाद इज्ज़ा को मिलाकर मिलते हैं इस से साफ पाया जाता है कि एक मौसूफ में दो मुतज़ाद सिफत रह सकती हैं जिस तरह एक कालमें दो मुतज़ाद जुज़ रह सकते हैं।

जवाब—क्योंकि कुल व जुज़ दोनों सिफतें रखने से मौसूफ है और सिफतों में सिफत नहीं रह सकती जैसा कि गुण के लक्षण में बयान किया गया है।

द्रव्याश्रय अगुणवान

अर्थ—जो किसी द्रव्य यानी जौहर चीज़ के सहारे है और वह जो खुद अर्ज़ या गुण न रखता हो उसे गुण यानी अर्ज़ कहते हैं इस जब कि गुण में गुण का न होना उसकी तारीफ है और जुज़ में सिफात मौजूद होती हैं इस वास्ते सिफात व इज्ज़ा को एक बतलाना बिल्कुल ग़लती है।

सवाल—जैसे गर्म पानी में गर्मी तो मौजूद नज़र आती है और उस की सिफत सर्दी भी ज़रूर माननी पड़ेगी क्योंकि सिफत अपने मौसूफ से कभी अलेहदह नहीं हो सकती इस वास्ते एक ही पानीमें दो मुतज़ाद सिफात गर्मी और सर्दी मौजूद देखने से साफ पाया जाता है कि यह नियम कि दो मुतज़ाद सिफतें एक मौसूफ में नहीं रह सकतीं ग़लत है।

जवाब—यह मिसाल औरभी ग़लत है क्योंकि गर्मी अग्नि की सिफत है और आग बसबब लतीफ होने के पानी में दाख़िल हो गई है इस वास्ते गर्म पानी आग और पानी दो इज्ज़ासे मुरक्किब है और दोनों मुतज़ाद सिफतें अपने २ मौसूफ में रहती हैं एक मौसूफ में नहीं।

सवाल—हम आग को द्रव्य जौहर नहीं मानते इसवास्ते गर्मी को आग की सिफत कहना ठीक नहीं क्योंकि जौहर के वास्ते वज़न का होना लाज़िमी है और आग में वज़न नहीं अब तक जितने साइन्सदान हुए हैं सब आग में वज़न नहीं मानते।

जवाब—सिर्फ वज़नदार ही को द्रव्य मानना यह आप की ग़लती है क्योंकि द्रव्य का यह लक्षण है।

क्रियागुणवत्समवायि कारणमिति द्रव्यलक्षणम्।

अर्थ—जिस वस्तु में क्रिया यानी हरकत और गुण यानी सिफत

और समवाय कारण होने की ताकत हो उसे द्रव्य कहते हैं पस जौहर में वज़न का होना लाज़िमी है लेकिन वज़नका होना लाज़िमी मानना सिर्फ़ ग़लती ही नहीं बल्कि वज़नकी पैदाइश को न जानने में दाख़िल है क्योंकि वज़न सिर्फ़ ज़मीन की आकर्षण से पैदा होता है जिस क़दर कशिश ज़मीन किसी चीज़पर असर कर सकती है उसी क़दर उसमें वज़न मालूम होता है मसलन् एक चीज़ अगर नीचेकी तरफ़ गिरे तो उसमें बिल्कुल वज़न नहीं मालूम होगा या बहुत कम मालूम होगा लेकिन ऊपर की तरफ़ उठाने में बहुतसी तकलीफ़ भी होगी और वज़न भारी मालूम होगा इससे साफ़ पाया जाता है कि वज़न ज़मीन की कशिश है बल्कि यही सारी कलोंकी ईजादका सबब है क्योंकि इसी आकर्षण शक्ति यानी पृथ्वीकी कशिश के ख़यालसे पहले पहिया बनाया गया और उसमें तमाम कलें ईजाद हुई लेकिन अग्नि पर बसबब लतीफ़ होने के कशिश ज़मीनका असर बहुत कम पड़ता है दूसरे अग्नि का ख़ास्सा हमेशा ज़मीन के ख़िलाफ़ है. ज़मीन हर चीज़ को अपनी तरफ़ खींचती है अग्नि चीज़ों को लतीफ़ करके जिस पर कशिश की ताक़त असर नहीं कर सकती हर चीज़ को ऊपर की तरफ़ ले जाती है ज़मीन हमेशा सकोड़ती है अग्नि हमेशा फैलाती है-ग़ालिबन् कि ज़मीन और पानी दो चीज़ें अग्नि के ख़िलाफ़ काम करते हैं. लेकिन अग्नि की लताफ़त की वजह से उसका कुछ नुक़सान नहीं कर सकते और इसीसे पेट और अंजन की तरकीब निकली है।

सवाल--अगर दुःख जीवका स्वाभाविक गुण न मानें तो सृष्टि में जो पहला जन्म हुआ उसमें दुःख किस तरह हुआ क्योंकि उसवक़्त तक न तो मिथ्या ज्ञान वग़ैरह दुःख के साधन थे और न और कोई निमित्त कर्म था जिससे दुःख मिल सके।

जवाब—अव्वलतो सृष्टि प्रवाह से अनादि है लेकिन हरएक सृष्टि के शुरूमें तो सांकल्पिक सृष्टि होती है जिसके गर्भ में न आने से और ज्ञानी होनेसे उन्हें कुछ भी दुःख नहीं होता और जो लोग गर्भ में आते हैं उन के पहली सृष्टि के कर्म मौजूद होते हैं।

सवाल--तुम्हारी प्रवाह और स्वरूप अनादि और शुरू कहने का मतलब क्या

है यह असंगत बात है कि एक चीज़ अनादि हो और उसका शुरू भी हो।

जवाब—जिस तरह से रोज़ सुबह से दिन शुरू होकर शामको ख़तम होजाता है इसी तरह हर दिन का शुरू और ख़तम स्वरूप से सादि कहलाता है दूसरे जिस तरह रातसे पहले दिन और दिन से पहले रात होती है इसी तरह सृष्टि के प्रलय पहले और प्रलय के पश्चात् सृष्टि होती है इस सिलसिले को प्रवाह कहते हैं पस हर सृष्टि स्वरूपसे सादि और प्रवाह यानी सिलसिले से अनादि।

सवाल--कोई बिना गर्भ के पैदा नहीं होता है ? अगर ऐसा माना जावे तो सृष्टि का बिल्कुल कोई नियम ही नहीं रहता।

जवाब--बेशक, गर्भ के बिना भी लोग पैदा होते हैं लेकिन इससे सृष्टिके नियम में कोई ख़लल नहीं आता क्योंकि सृष्टि ६ तरह से पैदा होती है एक सांकल्पिक यानी ख़्वाहिश से दूसरी जेरज यानी गर्भ से तीसरी स्वेदज यानी पसीने से-चौथी अण्डज यानी अण्डों से-पांचवें उद्भिज यानी ज़मीन से जिस तरह दरख़्त और वनस्पति पैदा होती है-छठि सांसिद्धिक जैसे आगें पैदा होती है।

सवाल--यह तो मुख़्तलिफ़ क़िस्म की चीज़ों की पैदाइश के वास्ते मुख़्तलिफ़ नियम हैं लेकिन सिर्फ़ इन्सान की पैदाइशके वास्ते दो नियम किस तरह हो सकते हैं कि वह बग़ैर गर्भ के भी पैदा हो सकते हैं और आज कल बग़ैर गर्भ के कोई पैदा हो नहीं सकता इस वास्ते सृष्टि के नियमों में इख़्तलाफ़ होने से इन दो में से एक ही नियम हो सकता है ख़्वाह नियम बग़ैर गर्भ के तसलीम करो या गर्भ से—लेकिन गर्भ से पैदाइश तो बराबर नज़र आती है और बग़ैर गर्भ के सृष्टि के वास्ते कोई प्रमाण नहीं इस वास्ते बग़ैर गर्भ के सांकल्पिक सृष्टि का मानना ग़लती है।

जवाब—संसार में जिस क़दर टाइप और सांचे बनाये गये हैं और जिन से आज कल टाइप और सांचे बनते हैं वे सब पहले हाथ से तैयार किये गये लेकिन अब सांचे से ढाले जाते हैं इस से साफ़ मालूम होता है कि जहां चीज़ों के इख़्तलाफ़ से उन की पैदाइशके मुख़्तलिफ़ नियम होते हैं वहां ज़माना और हालत के इख़्तलाफ़ से भी नियमों में फ़र्क होना लाज़िमी है शुरू ज़माने में सांकल्पिक सृष्टि का हो-

का और अब उस को गर्भ से सृष्टि की पैदाइश मानने में कोई दोष नहीं जिस तरह, पहले कारीगर आर्किटेक्ट कापी आप ही लिख कर पत्थर पर जमा देते हैं और उस को तकमील के बाद वह छपना शुरू हो जाता है इसी तरह बिला गर्भ के आग़ाज़ दुनिया में ईश्वर की सिफ़्त से दुनिया में इन्सानों की पैदाइश मुमकिन है।

सवाल—तो इसी तरह मुख़्तलिफ़ किस्म के तरीक़ पैदाइश होंगे इस वास्ते तुम्हारी छः किस्म की सृष्टि के बजाये बहुत किस्म की सृष्टि हो जायगी?

जवाब—बिल्कुल नहीं क्योंकि सांकल्पिक सृष्टि में हर किस्म के नियमों का पहले बनाना आजाता है जब सब मानव शक्लों में तैयार हुये हैं

सवाल—तुम्हारे इस सिद्धान्त में प्रत्यक्ष प्रमाण नहीं जिस का तीन काल में प्रत्यक्ष उस का अनुमान वगैरह भी क़ाबिल यक़ीन नहीं क्योंकि अनुमान व्याप्ति यानी तअल्लुक़ के ज्ञान से होता है और तअल्लुक़ का ज्ञान प्रत्यक्ष से होता है और जिस का तीन काल में प्रत्यक्ष न हो उस में अनुमान वगैरह का मानना ठीक नहीं।

जवाब—तुम्हारा यह ख़याल ठीक नहीं क्योंकि संसार में दो किस्म की चीज़ें हैं एक अपरोक्ष दूसरे परोक्ष, अपरोक्ष चीज़ों का ज्ञान तो, प्रत्यक्ष से होता और परोक्ष चीज़ों का ज्ञान प्रत्यक्ष प्रमाण यानी इन्द्रियों से नहीं होता इस वास्ते उनका ज्ञान शब्द और बुद्धि से होता है।

सवाल—शब्द प्रमाण भी प्रत्यक्ष के बगैर क़ाबिल तसलीम नहीं क्योंकि शब्द का झूठा या सच्चा होना ख़ुद सबूत का मुहताज होता है इस वास्ते प्रत्यक्ष से बिना और कोई प्रमाण क़ाबिल यक़ीन नहीं क्योंकि सबूत के मुहताज हैं।

जवाब—तुम्हारे कहने से मालूम होता है कि तुम सिर्फ़ इन्द्रियों के प्रत्यक्ष को ही प्रमाण मानते हो लेकिन यह तुम्हारा मानना ठीक नहीं क्योंकि मानसिक प्रत्यक्ष भी होता है अगर तुम मानसिक प्रत्यक्ष को तसलीम न करोगे तो तुम्हारे वास्ते कोई परोक्ष पदार्थ संसार में न होगा उस वक़्त अव्वल तो तुम्हारे दुख सुख और मन बुद्धि वगैरह सब ही का अभाव मानना पड़ेगा क्योंकि इनका प्रत्यक्ष किसी इन्द्री से होता नहीं और बिना इन्द्रिय के प्रत्यक्ष मानते नहीं फिर तुम्हें अपना

ज्ञान भी न होना चाहिये क्योंकि तुम भी प्रत्यक्ष नहीं हो इसीवास्ते श्रुति में बतलाया है कि विद्वान् लोग प्रत्यक्ष की निसबत अनुमान और शब्द को ज़ियादह प्रमाण मानते हैं और जो चीज़ें परोक्ष हैं उन्हीं से ज़ियादह प्यार करते हैं जैसा कि लिखा है—

परोक्षप्रिया इव हि देवाः प्रत्यक्षद्विषः।

अर्थ—देव यानी विद्वान् लोग प्रत्यक्ष के मुक़ाबिल और परोक्ष के प्यारे होते हैं क्योंकि प्रत्यक्ष प्रमाण तो मनुष्य और पशु में सामान्य है और उसका विषय भी सिर्फ़ जड़ पदार्थ हैं जिन के सम्बन्ध से जीवात्मा को सिवाय दुःख और हानि के कुछ भी लाभ नहीं हो सका बल्कि जड़ प्रकृति भी जब तक प्रत्यक्ष का विषय नहीं होती यानी स्थूल हालत को प्राप्त नहीं होती तब तक दुःख का सबब नहीं होती इसवास्ते जो कुछ प्रत्यक्ष का विषय है वह सब रागद्वेष और मिथ्या ज्ञान को पैदा करके दुःखों का साधन होता है सिर्फ़ परोक्ष पदार्थ जो कारण रूप जीवात्मा-परमात्मा और प्रकृति वगैरह हैं उन्हीं के ज्ञान से मुक्ति नसीब होती है और इनका ज्ञान प्रत्यक्ष से होता नहीं और न ही मुक्ति प्रत्यक्ष का विषय है जब कि मुक्ति और मुक्ति के साधन दोनों प्रत्यक्ष का विषय नहीं तो कोई अक़्लमन्द आदमी ऐसे प्रमाण पर किस तरह भरोसा कर सकता है जिससे कार्य का मतलब हासिल होने की उम्मेद ही नहीं।

सवाल—अभी तो शब्द को प्रमाण स्वीकार नहीं किया गया तुम श्रुति का प्रमाण क्यों देते हो यह तुम्हारा प्रमाण साध्यसमहेत्वाभास है जब तक तुम शब्द को प्रमाण सिद्ध न कर लो तब तक तुम्हारा श्रुति प्रमाण देना बिल्कुल ठीक नहीं तुम्हारे इसी तरीक़े से तुम्हारा सिद्धान्त की कमज़ोरी साबित होती है।

जवाब—प्रत्यक्ष को तुमने किस तरह प्रमाण स्वीकार किया, अगर कहो सर्व सम्मति या आचार्यों के कहने से तो, तुम्हारा प्रत्यक्ष भी उसी दोष से दूषित है क्योंकि आचार्यों के कथन और सर्व सम्मति का ज्ञान तुम्हें शब्द से हुआ और शब्द को तुमने प्रमाण स्वीकार नहीं किया अगर कहो प्रत्यक्ष को हम प्रत्यक्ष से ही सिद्ध मानते हैं तो तुम्हारे प्रत्यक्ष की सिद्धि भी वही प्रत्यक्ष प्रमाण है या कोई दूसरा प्रत्यक्ष है अगर कहो वही है तो आत्माश्रय दोष है अगर कहो उस प्रत्यक्ष से अलैहदा है तो अनवस्था आ जायगी।

सवाल—अगर मानसिक प्रत्यक्ष मान लें तो फिर परोक्ष पदार्थों का ज्ञान तो हो जायगा ऐसी दशा में शब्द वगैरह प्रमाण मानने की ज़रूरत नहीं रहेगी।

जवाब—शब्द वगैरह को हर हालत में प्रमाण मानना पड़ेगा क्योंकि मानसिक प्रत्यक्ष तो सबका सबको तो होगा नहीं और आचार्य वगैरह का आप्त शब्द होने से प्रमाण नहीं गिना जायगा तो सब पढ़ने पढ़ाने का यह सिलसिला खतम हो जायगा और हम इस आदमी न तो आलिम बन सकेंगे और न हो दूसरेके इल्मसे फायदा उठाया जायगा।

अब कपिल जीके व्याख्यान पर इसतरह के मुख़्तलिफ़ सवाल होनेलगे कि जबतक मुक्तिके स्वरूपसे सीधे तौरपर बिल्कुल कुछ न था तब तत्ववेत्ता ऋषि जी ने कहा कि इसवक्त विचार प्रकरण से बाहर जा रहा है और इस तरीके से किसी मसले का फैसला प्रलय तक नहीं हो सकेगा इन मसाइल की बहस शास्त्रों की मबाहस की बहस में की जावेगी और महात्मा कपिल जी ने मुक्ति का स्वरूप दुःखों की निवृत्ति बतलाया और निवृत्ति प्राप्त की होती है इससे मालूम हुआ कि मौजूदः हालत में जो दुःख है वह आगे को न रहे यही दुःख की निवृत्ति कहलाती है इस वास्ते महात्मा कपिल जी तीन कालमें दुःखों की निवृत्ति को तो मानते नहीं बल्कि आगे आनेवाले दुःखोंकी निवृत्ति को मुक्ति बतलाते हैं इससे साफ़ ज़ाहिर है कि मुक्ति के स्वरूप में महात्मा कपिल जी भी गौतम जी और कणाद के साथ इत्तफ़ाक़ रखते हैं इन तीनों ऋषियों के शास्त्रों में दुःख का अत्यन्ताभाव मुक्ति नहीं बल्कि दुःख का ध्वंसाभाव मुक्ति है जिसका ध्वंस यानी नाश होता है उस की पैदायश लाज़िमी है इस वास्ते दुःख जीव का स्वाभाविक धर्म नहीं—जो लोग महात्मा गौतम और कपिल में जीव के स्वरूप का झगड़ा बतलाते हैं वे बिल्कुल ग़लती करते हैं क्योंकि गौतम जी भी दुःखको नैमित्तिक मानते हैं यानी मिथ्या ज्ञान की सन्तान जानते हैं और कपिल जी भी दुःख को जीवके स्वरूप से अलेहदः बतलाते हैं क्योंकि उन्होंने लिखा है कि

असङ्गोऽयंपुरुषः।

यानी जीवात्मा असंग है यहां तक मालूम होगया कि गौतम कपिल और कणाद का जीव के स्वरूप और मुक्ति के स्वरूप में इत्तिफ़ाक़ है अब महात्मा पतञ्जलि जी भी मुक्ति का स्वरूप बयान करेंगे आप सब लोग उनके व्याख्यान

को दिल लगाकर सुनें और जो ऐतराज़ हो उनसे पूछ सकते हैं लेकिन बारी बहस तकल्लुफ़ात इसी की बाबत से होशियार जीतके ख्याल को छोड़कर बहस करके ऋषियों का वक्त बेकार न खोवें।

महात्मा पतञ्जलि जी का व्याख्यान।

हम भी आनेवाले दुःख को दूर करना ही मुक्ति मानते हैं क्योंकि कोई मनुष्य ऐसे काम के वास्ते पुरुषार्थ नहीं करता कि जो या तो हासिल हो या असाध्य हो—हमारे ख्याल में गुज़िश्ता दुःख की निवृत्ति तो हासिल है उसके वास्ते पुरुषार्थ करना बेफ़ायदा है और मौजूदः दुःखकी निवृत्ति मौजूदः हालत में असाध्य यानी नामुमकिन है और जिस काल में वह पुरुषार्थ से दूर होगा तब वह गुज़िश्ता में चला गया होगा और यह ही नियम दुनिया में नज़र आता है कि पशु और पशु बुद्धि वाले आदमी मौजूदः का ही इन्तज़ाम करते हैं वे गुज़िश्तों के नतीजों को लेकर उनसे आगे का इन्तज़ाम नहीं कर सकते सिर्फ विद्वान लोग जो गुज़िश्ता नतीजों और कार्य कारण के ज्ञान से आने वाले दुःखों के दूर करने का पुरुषार्थ कर सकते हैं इस वास्ते हमारे ख्याल में यही मनुष्य और पशु में फ़र्क़ है और यही मनुष्य जीवन का उद्देश है:—

हेयंदुःखमनागतम्॥

यानी आनेवाले दुःख को दूर करना चाहिये—अब सवाल यह पैदा होता है कि आनेवाले को किस तरह पर दूर कर सकते हैं उसका जवाब यह है कि जिस तरह वैद्यक शास्त्र के ज्ञानी वैद्य रोग के निदान को मालूम करके रोग को दूर करते हैं यानी वैद्यक शास्त्रमें यह चार चीज़ें लाज़िमी जानने लायक हैं प्रथम रोग दूसरे निदान तीसरे आरोग्यता चौथे आरोग्यता के कारण—अगर ग़ौर से सोचा जावे तो मोक्ष शास्त्र में भी इन चारों चीज़ोंका जानना ज़रूरी है अव्वल दुःख जो दूर करने लायक है दूसरे दुःख के हेतु तीसरे आरोग्यता की हालत यानी मुक्ति या जीवका असली स्वरूप चौथे मुक्ति यानी सेहतके असबाब अब हमारे शास्त्र में भी इन सबकी तशरीह मौजूद है इनको साबित करने के वास्ते अगर्चे संसार में कोई दृष्टान्त सर्वसाधारण की समझमें नहीं लेकिन समझदार लोगों के वास्ते परमात्मा ने एक ऐसी मिसाल दी है जो सार्व तौर पर साबित करती है कि मुक्ति दुःखके छूटनेका नाम है उस मिसाल को जो मुक्ति अवस्थाका ज्ञान कराती है सुषुप्तिकी अवस्था है सुषुप्तिकी हालत में कोई इन्द्रिय अपनी विषयकी तरफ़ नहीं लगती जिससे मिथ्या ज्ञान और दुःख पैदा नहीं होता अब लोग उठकर यह कहते हैं कि हम सुखसे सोये तो दुःखका न होना भी

परम सुख या मुक्ति है इसवास्ते यह एक आदमी को दुःखों से बचने की कोशिश करनी चाहिये-दुःख जिस क़दर पैदा होते हैं सब मिथ्या ज्ञान से पैदा होते हैं और मिथ्या ज्ञान इन्द्रिय और अर्थ के संयोगसे पैदा होताहै इसवास्ते जब तक इन्द्रिय और अर्थ का संयोग नष्ट न होवे तबतक नतो मिथ्या ज्ञान दूर होगा और न ही मिथ्या ज्ञान से पैदा होने वाले राग द्वेष और सुख दुःख ही विनाश होगा जैसा कि उपनिषदकारने लिखा है चूंकि जीवात्मा इन्द्रियों को बाहर की तरफ फैलाता है अन्दर की तरफ नहीं इसलिये इन्द्रियं बेहनी चीजोंको ही देखतीहै यानी उसे प्राकृत पदार्थोंका ही ज्ञान होताहै इसवास्ते जाग्रत अवस्था में सबको दुःख होता है और सुषुप्ति अवस्था में सुख होता है।

सवाल—सुषुप्ति अवस्था को मुक्ति के वास्ते मिसाल ठहराना ठीक नहीं क्योंकि सुषुप्ति अवस्था बिल्कुल अज्ञान की हालत है और मुक्ति अवस्था पूर्ण और यथार्थ ज्ञान की दशा है।

जवाब—हम ने सुषुप्ति और मुक्ति को सिर्फ दुःख और इन्द्रियों से सम्बन्ध न होने के वास्ते मिसाल में पेशकिया है सो दोनों हालतों में इन्द्रियों और दुःख का सम्बन्ध जीव के साथ नहीं होता और इसी अज्ञान के फ़र्क को दूर करने के वास्ते हमने समाधिका बयान किया है और इस के साधनों का ज़िक्र अपने ग्रन्थ में ठीक तौर पर किया है।

सवाल—क्या तुम मुक्ति समाधि और सुषुप्ति को एक ही स्वरूप जानते हो या तुम्हारे इसमें कुछ भेद है और समाधि आनन्द की प्राप्ति के वास्ते कहते हो या दुःख की निवृत्ति के वास्ते।

जवाब—जब अज्ञान से जीवात्मा इन्द्रियों और मन से बेखबर होता है उस हालत का नाम सुषुप्ति है और जब ज्ञान से इन्द्रियों को रोक मन को एकाग्र करता है और संसार के विषयों से बिल्कुल बेखबर हो जाता है उसका नाम समाधि है और समाधि में जब दुःखों की निवृत्ति हो जाती है तब ब्रह्म का आनन्द जो कि हमेशा जारी तरक्क़ि रहा है इस वक़्त प्रतीत होने लगता है और जब तक प्राकृत इन्द्रिय और मन से बिल्कुल बेखबर न होजाये तब तक दुःख दूर नहीं हो सकता और जब तक दुःख दूर न हो तब तक ब्रह्मानन्द के सर्वत्र व्यापक होने से भी उसका ज़रा भी ज्ञान नहीं होता इस वास्ते कहा है कि तीन ही हालतों में ब्रह्म के सम्बन्ध से आनन्द

की प्राप्ति और दुःख की निवृत्ति होती है जैसा कि कपिल जी ने सांख्यसूत्र में कहा है।

समाधिसुषुप्तिमोक्षेषु ब्रह्मरूपता। अध्याय ५ सूत्र

अर्थ—समाधि सुषुप्ति और मुक्ति इन तीन हालतों में जीव को ब्रह्म का आनन्द प्राप्त होता है।

सवाल—मुक्ति आनन्द की प्राप्ति का नाम है दुःख की निवृत्ति का नाम नहीं या यों कहो कि तीन क़िस्म के दुःखों की निवृत्ति और आनन्द की प्राप्ति का नाम मुक्ति है।

जवाब—मुक्ति सिर्फ दुःख की निवृत्ति का नाम है और आनन्द की प्राप्ति उस का फल है जैसा कि क़ैद से छूटने का नाम आज़ादी है और छूट कर सुख के साधनों के हासिल करने का नाम आज़ादी नहीं और कहो कि ऐसा अगर मानने में क्या दोष है कि दुःखों से छूट कर आनन्द की प्राप्ति होना मुक्ति है तो सवाल यह पैदा होगा कि एक ही काल में निवृत्ति और प्राप्ति होगी या कुछ देर बाद अगर कहो एक ही काल में दोनों की प्राप्ति होगी तो ठीक नहीं क्योंकि अल्पज्ञ जीवात्मा एक काल में बहुत से पदार्थों का ज्ञान नहीं कर सकता अगर कहो कर सकता है तो जीव सर्वज्ञ हो जायगा या तुम को नियम करना पड़ेगा कि इतने पदार्थों का एक काल में ज्ञान कर सकता है इस से ज़ियादह का नहीं अगर कहो सर्वज्ञ हो जायगा तो क्या हानि है इस का जवाब यह है कि महदूद जीव में ग़ैरमहदूद ताक़त नहीं रह सकती अगर कहो पहले दुःख से निवृत्ति होगी और बाद में आनन्द की प्राप्ति होगी तो तुम्हारी मुक्ति प्राप्त नहीं कि जिस कालमें दुःख निवृत्ति होगी उस कालमें आनन्द की प्राप्ति नहीं होगी और जिस काल में आनन्द की प्राप्ति होगी उस काल में दुःख की निवृत्ति नहीं होगी और तुम दोनों की प्राप्तिको मुक्ति मानते हो और दोनों एक काल में हो नहीं सकते।

सवाल—नहीं एक ही काल में दोनों चीज़ें होती हैं जैसे प्रकाश आता है तब ही अंधकार नष्ट होजाता है ऐसे ही आनन्द की प्राप्ति होने से दुःखों की निवृत्ति होजायगी

जवाब—अकसर आम लोग ऐसा ही समझते हैं लेकिन दर हक़ीक़त यह ठीक नहीं कि जिस लमहा में रोशनी आती है उसी काल में अंधेरा चला

जाता है क्योंकि ऐसा मानने से रोशनी अंधेरे को दूर करने का सबब नहीं रहेगी पहले समय में रोशनीका आना दूसरेमें अंधेरेका आना मुमकिन हो सकता है और यह ख़्याल कि दोनों एक साथ होते हैं सिर्फ़ उन् लोगों का ख़याल है जो मोटी अक़्ल रखते हैं ।

जब महात्मा पातञ्जलि ने अपना सिद्धान्त बयान कर दिया तब महात्मा तत्ववेत्ता जी ने कहा कि अब इस मुआमले में ज़्यादा गुफ़्तगू की ज़रूरत नहीं मालूम होती क्योंकि अब चार शास्त्रकारों के मत में दुःखोंके दूर होने का नाम मुक्ति है तो बाक़ी दो का सिद्धान्त इस के ख़िलाफ़ नहीं हो सकता जहां कहीं श्रुति ने आनन्द के शामिल करनेको मुक्ति कहा गया है वह मतलब यह है कि जिस मतलब की ख़्वाहिश से मुक्ति की ज़रूरत है उस मतलब को भी उसी नाम से ज़ाहिर कर दिया है और असल दुःखों से छूटना मुक्ति है और आनन्द प्राप्ति उस का फल है जिस तरह कोई फल बिना वृक्ष के पैदा नहीं होता या बिना कारण के कार्य्य नहीं होता ऐसी तरह बग़ैर दुःखों से छूटने के अल्पज्ञ आत्मा ब्रह्मानन्द को नहीं प्राप्त कर सकता और जब तक आनन्द प्राप्ति न हो तब तक इच्छा दूर नहीं होती और जबतक इच्छा दूर न हो तब तक शान्ति और आज़ादी हासिल नहीं होती इस वास्ते हर एक आदमी को पहले दुःख की निवृत्ति के वास्ते मन और इन्द्रियों को रोककर प्रकृति की उपासना से अलैहदा होना लाज़िमी है फिर ब्रह्मानन्द जो हर जगह पर मौजूद है जिसे दुःखों के आवरण से मालूम नहीं होता ख़ुद बख़ुद प्राप्त होजायगा यह कहकर तत्ववेत्ता जीने कहा कि अब संध्या काल होगई है इसवास्ते अब सभाको ख़तम करके कल फिर प्रातः संध्याके बाद किसी दूसरे ज़रूरी मज़मून पर विचार किया जायगा आप लोगों ने इस मज़मून को तो समझ ही लिया होगा ।